वैश्विक संवाद GLOBAL DIALOGUE

3.1

14 भाषाओं में एक वर्ष में 5 अंक

गहराता हुआ संरचना–विकास

मारग्रेट आर्चर

आईएसए का ऊपर उठना

इजाबेला बार्लिन्सका से साक्षात्कार

आधुनिकता और इस्लाम

रियाज हसन
मोहम्मद बामेह
जैक्स कब्बनजी

> यूक्रेन में लोक समाजशास्त्र के लिए संभावनाएँ
> रोमानियां की असंतोष की ठंड
> वैश्वीकरण से परे रोमानियन समाजशास्त्र
> **Sociopedia.isa** के तीन वर्ष
> सभी के लिए बेहतर स्वास्थ्य सेवा
> श्रद्धांजलि : इवान वर्गा, 1931–2012
> क्रिटिकअटैक: रोमानिया से एक पूंजीवाद विरोधी घोषणा पत्र
> फोटो–निबन्ध : प्रवासियों के लिये एक मृत्यु जाल
> 'मुक्त पहुँच' कौनसे दरवाजे खोलती है?
> हमारे भारतीय सम्पादक दल का परिचय
> फोटो निबन्ध: हाशिये पर जीवित रहना

सूचना पत्र

International Sociological Association

GD अंक 3 / क्रमांक 1 / नवम्बर 2012
www.isa-sociology.org/global-dialogue/

> सम्पादकीय

भाषा का प्रश्न

द्वितीय आईएसए फोरम एक महान सफलता थी। 1 से 4 अगस्त के मध्य ब्यूनस आयर्स विश्वविद्यालय के आर्थिक संकाय में 55 शोध समितियों (RCs) विषयक समूहों (TGs), एवं कार्यकारी समूहों (WGs) में 3,600 पंजीकृत सहभागी एक साथ एकत्रित हुए। इस सफलता के लिए हमें आईएसए की उपाध्यक्ष शोघ एवं फोरम की अध्यक्ष मारग्रेट अब्राहम, इजाबेला बार्लिन्सका तथा आईएसए सचिवालय के कर्मचारीगण, तथा स्थानीय संगठन समिति के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष अल्बर्टो बियालाकोवस्की तथा एलिसिया पालेरमों के समर्पित प्रयासों को धन्यवाद देना चाहिये। किसी भी मायने में RCs, TGs and WGs के नेताओं की संगठनात्मक योग्यताओं एवं निष्ठा को भी कम महत्वपूर्ण नहीं माना जा सकता जिन्होनें कि सत्रों में भागीदारी के लिए निरंतर बढती हुई मांगों का सामना किया। हमनें ब्यूनस आयर्स से अर्न्तमहाद्वीपीय परिचर्चाओं, लेटिन अमेरिकन समाजशास्त्र से प्रभावित होते हुए तथा 2014 में योकोहामा कांग्रेस की तरफ बढने के लिए तैयार होकर उत्साहपूर्वक विदाई ली।

हम पिछली बार 1982 में लेटिन अमेरिका आये थे जब हमारी कांग्रेस मैक्सिको सिटी में आयोजित हुई थी। जैसा कि इजाबेला बार्लिन्सका वैश्विक संवाद के इस अंक में प्रकाशित साक्षात्कार में स्मरण कर रही हैं, यह एक प्रचंड सभा थी जिसमें कि स्थानीय सहभागी अंग्रेजी भाषायी साम्राज्यवाद से सही रुप से कुपित थे। 1982 की इस कांग्रेस के बाद ही स्पैनिश भाषा को फ्रेन्च एवं अंग्रेजी के साथ आईएसए की अधिकारिक भाषा के रुप में जोडा गया। 30 वर्षों बाद हम भाषायी समस्या का प्रबन्धन करने में अधिक सफल हो पाये, जबकि पूर्ण सत्रों (plenaries) का समकालिक अनुवाद होने लगा, स्पैनिश भाषा के सत्रों के साथ बहुभाषायी सत्रों के साथ तथा विभिन्न तरीकों से भाषाओं के पार संचार करने में हर व्यक्ति का मददगार बनने के साथ।

पिछले 30 वर्षों के दौरान हमारी सभाऐं न केवल भाषा के मामले में बल्कि अन्य अनेक आयामों में और अधिक समावेशी बनी हैं। इसी के साथ, अंग्रेजी भी एक और अधिक काम में ली जाने वाली भाषा के रुप में अधिक प्रभावी हुई है, जिसे कि अब दुनियां भर में दूसरी वरीयता प्राप्त भाषा के रुप में और अधिक स्वीकार किया जाने लगा है। निःसन्देह, इसके अपने फायदे हैं, इसकी वजह से समाजशास्त्र का क्षेत्र विस्तारित हुआ है और इसने अनेक लोगों को नये अवसरों तथा सामग्री की सम्पदा तक पहुंच प्रदान की है। तदापि, अंग्रेजी के विस्तार ने अपनी ही असमानताऐं उत्पन्न की हैं: अंग्रेजी से अनभिज्ञ लोगों का गहरा बहिष्करण, और जो जानते है उनके मध्य भी ऊंच–नीच के वर्गीकरण की निर्मिति। अंग्रेजी में धाराप्रवाहिता, किसी भी अन्य भाषा की अपेक्षा, कहीं अधिक फायदा पहुंचाती है चाहे फिर वो मौखिक प्रस्तुतियां हों अथवा लेखों को छपवाना हो, और इस प्रकार न केवल वैश्विक स्तर पर बल्कि राष्ट्रीय वैज्ञानिक समुदायों के मध्य भी (जहां अंग्रेजी दूसरी भाषा है), अंग्रेजी एक ''विशिष्ठता'' का निशान बन जाती है।

जिस प्रकार विश्वविद्यालय सांकेतिक प्रस्थिति के लिए वैश्विक प्रतियोगिता में लगे हुए हैं (जिसके साथ भौतिक प्रतिफल भी प्राप्त होते है), अर्न्तराष्ट्रीय पत्रिकाओं में छपवाना पुरुस्कार स्वरुप है। इसका तात्पर्य यह हुआ कि न केवल अंग्रेजी में छपवाना परन्तु उन संरचनाओं तथा पैराडाइम्स में जो कि लेखक के अपने समाज की समस्याओं और मुद्धो के लिए बाहरी हैं में शोध करना। फिलिस्तीनी समाजशास्त्री सारी हनाफी ने इसे इस प्रकार कहा है : ''वैश्विक स्तर पर छपवाइये और स्थानीय स्तर पर नष्ट हो जाइये अथवा स्थानीय स्तर पर छपवाइये और वैश्विक स्तर पर नष्ट हो जाइये।'' इस चुनौती का सामना करने का तात्पर्य है द्वि–भाषी होना, द्वि–पेशेवर होना, दुगना कार्य करना, तथा विविध श्रोताओं को संबोधित करना। यह न केवल अन्य सभी के लिए बल्कि यूएस एवं यूके के सर्कीण समाजशास्त्रियों के लिए भी उतना ही लागू होता है। इस मायने में ब्यूनस आयर्स फोरम ने वैश्विक समाजशास्त्र के लिए नये मानक स्थापित किये हैं।

> वैश्विक संवाद को आईएसए वैबसाइट पर 14 भाषाओं में देखा जा सकता है।
> प्रस्तुतियां (Submissions) burawoy@berkeley.edu पर प्रेषित की जा सकती हैं।

***मारग्रेट आर्चर**, भूतपूर्व आईएसए अध्यक्ष, समाजशास्त्र के अपने उस दर्शन के प्रश्न का परीक्षण प्रस्तुत कर रही हैं जो कि सामाजिक संरचना तथा सामाजिक अभिकर्ताओं के मध्य विकसित होती हुई अन्तःक्रिया है, जिसे कि वह संरचना विकास (morphogenesis) कहती हैं।*

***इजाबेला बार्लिन्सका** पिछले 25 वर्षो मे आईएसए के विकास का आकर्षक वैयक्तिक लेखाजोखा जारी रखते हुए बता रही हैं कि किस प्रकार 1987 में मैड्रिड में सचिवालय, जो तब से आज तक वहीं है, प्रतिरोपित किया गया था।*

***अर्नेस्ट गैलनर, मैक्स वेबर,** तथा **एडवर्ड सैड** तीनों ही आधुनिकता तथा इस्लाम के बारे में बहस में सामने आते हैं, जो कि यहां रियाज हसन, मोहम्मद बामेह तथा जैक्स कब्बनजी के विरोधी परिप्रेक्ष्यों में प्रतिनिधित्व पाते हैं।*

> Editorial Board

Editor:
Michael Burawoy.

Managing Editors:
Lola Busuttil, August Bagà.

Associate Editors:
Margaret Abraham, Tina Uys, Raquel Sosa, Jennifer Platt, Robert Van Krieken.

Consulting Editors:
Izabela Barlinska, Louis Chauvel, Dilek Cindoğlu, Tom Dwyer, Jan Fritz, Sari Hanafi, Jaime Jiménez, Habibul Khondker, Simon Mapadimeng, Ishwar Modi, Nikita Pokrovsky, Emma Porio, Yoshimichi Sato, Vineeta Sinha, Benjamin Tejerina, Chin-Chun Yi, Elena Zdravomyslova.

Regional Editors

Arab World:
Sari Hanafi, Mounir Saidani.

Brazil:
Gustavo Taniguti, Juliana Tonche, Pedro Mancini, Célia da Graça Arribas, Andreza Galli, Renata Barreto Preturlan, Rossana Marinho.

Colombia:
María José Álvarez Rivadulla, Sebastián Villamizar Santamaría, Andrés Castro Araújo.

India:
Ishwar Modi, Rajiv Gupta, Rashmi Jain, Uday Singh.

Iran:
Reyhaneh Javadi, Shahrad Shahvand, Saghar Bozorgi, Fatemeh Moghaddasi, Najmeh Taheri.

Japan:
Kazuhisa Nishihara, Mari Shiba, Kousuke Himeno, Tomohiro Takami, Yutaka Iwadate, Kazuhiro Ikeda, Yu Fukuda, Michiko Sambe, Takako Sato, Shohei Ogawa, Tomoyuki Ide, Yuko Hotta, Yusuke Kosaka.

Poland:
Mikołaj Mierzejewski, Karolina Mikołajewska, Jakub Rozenbaum, Michał Chełmiński, Krzysztof Gubański, Emilia Hudzińska, Julia Legat, Kamil Lipiński, Adam Müller, Mikołaj Niziński, Tomasz Piątek, Anna Piekutowska, Anna Rzeźnik, Konrad Siemaszko, Zofia Włodarczyk.

Romania:
Cosima Rughinis, Ileana Cinziana Badanau.

Russia:
Elena Zdravomyslova, Anna Kadnikova, Elena Nikiforova, Asja Voronkova, Alexander Kondakov.

Taiwan:
Jing-Mao Ho.

Turkey:
Aytül Kasapoğlu, Nilay Çabuk Kaya, Günnur Ertong, Yonca Odabaş.

Media Consultants:
Annie Lin, José Reguera.

> इस अंक में In This Issue

सम्पादकीय: भाषा का प्रश्न **2**

संरचना विकास (मार्फोजेनिसिस) की गहनता एवं पेशे के रूप में समाजशास्त्र
मारग्रेट आर्चर, स्विट्जरलैण्ड **4**

आईएसए का ऊपर उठना
ईजाबेला से साक्षात्कार, स्पेन **6**

> बहस

मुस्लिम विश्व में अभाव
रियाज हसन, सिंगापुर **9**

हसन को प्रत्युत्तर : अभाव की जटिलता को सीमित करना
मोहम्मद ए. बामेह, यूएसए **12**

हसन को प्रत्युत्तर : 'देशजतावाद/आंतरिकतावाद' (ओरिएन्टलिज्म) की सीमायें
जैक्स कब्बनजी, लेबनान **14**

> सोवियत विरासत

समकालीन रूस में लैंगिक प्रश्न
अन्ना टेमकिना,रूस **16**

यूक्रेन में लोक समाजशास्त्र के लिए संभावनाएँ
लिडिया कुजमेस्का, यूक्रेन **19**

> रोमानिया में समाजशास्त्र

रोमानिया में असंतोष की ठंड
केटेलिन अगस्तीन स्टोइका और विन्तिला मिहाइलेसक्यू, रोमानिया **20**

वैश्वीकरण से परे रोमानियन समाजशास्त्र
आयोना फ्लोरिया और डेलिया बदोई, रोमानिया **22**

क्रिटिकअटैक: रोमानिया से एक पूंजीवाद विरोधी घोषणा पत्र **24**

> आईएसए से समाचार

Sociopedia.isa के तीन वर्ष
बर्ट क्लेन्डरमान्स, नीदरलैण्ड **26**

सभी के लिए बेहतर स्वास्थ्य सेवा
ऐलन कुहलमान और क्लॉस वेण्ट, जर्मनी तथा ईवी बरगोट, कनाडा **27**

श्रद्धांजलि : इवान वर्गा, 1931–2012 **28**

> विशेष स्तम्भ

'मुक्त पहुँच' कौनसे दरवाजे खोलती है?
जैनिफर प्लाट, यूके **29**

भारतीय सम्पादक दल का परिचय
ईश्वर मोदी, भारत **30**

फोटो निबन्ध : हाशिये पर जीवित रहना
एलेक्सिया और एडवर्ड वेबेस्टर, साऊथ अफ्रीका **31**

> संरचना विकास (मार्फोजेनिसिस) की गहनता एवं पेशे के रूप में समाजशास्त्र

मारग्रेट आर्चर, इकॉल पॉलिटेकनिक फेडरेल डे लुजान, स्विट्जरलैण्ड एवं आइएसए की पूर्व अध्यक्ष (1986–1990)

मारग्रेट आर्चर आइएसए की 1986–1990 की अवधि में प्रथम एवं अब तक की अकेली महिला अध्यक्ष रहीं है। उन्होंने संरचना विकास (मार्फोजेनिसिस) की प्रक्रिया को सामाजिक परिवर्तन के अध्ययन में स्थान देने में मुख्य योगदान दिया। 'संरचना विकास' का अभिप्राय सामाजिक संरचना एवं सामाजिक अभिकरणों के मध्य क्रमिक अन्तः क्रिया से है। यह अन्तः क्रिया सांस्कृतिक समझ द्वारा सम्भव होती है। फ्रांसीसी एवं अंग्रेजी (ब्रितानी) शिक्षा व्यवस्थाओं के अध्ययनों से मारग्रेट आर्चर ने इस अवधारणा को प्रारम्भ किया। इस अध्ययन में दर्शाया गया कि किस प्रकार ये सामाजिक संरचनाएं प्रतिक्रिया करती हैं जो बाद में उन व्यवस्थाओं को पुनः आकार देते हैं। आर्चर ने अनेक पुस्तकें लिखी हैं जो कि उनकी 'वास्तविक' सामाजिक सिद्धान्त की समझ को व्यक्त करती हैं। समूचे विश्व में उनके समर्थक हैं। अनेक वर्षों तक उन्होंने वारिक विश्वविद्यालय में शिक्षण कार्य किया। वर्तमान में वे इकॉल पॉलिटेकनिक फैडरेल डे लुजान में स्थित 'सेण्टर आफ सोश्यल आन्टोलोजी' की निदेशक हैं।

मारग्रेट आर्चर लंदन में 2008 में इन्टरनेशनल एसोसिऐशन फॉर क्रिटिकल रीयलिज्म को सम्बोधित करते हुए।

समाजशास्त्र की उत्पत्ति चार प्रश्नों का उत्तर देने से सम्बद्ध है : ''हम कहाँ से आये हैं?'', ''अब यह किस तरह का है?'', ''हम किधर जा रहे हैं?'', एवं ''क्या करना है?'' ये सभी वास्तविक प्रश्न हैं। यह एक वास्तविक सामाजिक विश्व है जिसमें वास्तविक लोगों में वास्तविक विशेषताएं सीख द्वारा सम्मिलित हैं। ये वास्तविक लोग सामूहिक के द्वारा अतीत की रचना करते हैं तथा जिनमें विद्यमान कार्य कारण की शक्ति भविष्य का भी निर्माण कर रही है। वेबर ने एक तरीके से समाजशास्त्र की पेशे के रूप में चर्चा करते हुए कहा है कि इस का उद्देश्य यह खोज करना है कि वस्तुएं ''ऐसी'' क्यों है और ऐसी ''क्यों नहीं है''। जो वेबर की इस प्रतिबद्धता को मानते हैं वे बोद्रिया (Baudrillard) के इस विचार को कभी नहीं स्वीकारेंगे कि ''सब कुछ अब जो शेष करना है वह विभिन्न टुकड़ों से खेलना है।'' इब्न खाल्दून (Ibn Khaldun) ने इन स्थितियों को ही शायद एक पतनोन्मुखी सभ्यता की विशेषता बताया था।

उत्तर आधुनिकतावादी खिलाडीपन (प्लेफुलनैस) अधिक खतरनाक एवं विध्वंसकारी है क्योंकि वह टुकड़ों/अवयवों को वास्तव में तोड़ रही है। सभी सामाजिक जीवन–सूक्ष्म, मध्यम, अत्यधिक सूक्ष्म आवश्यक रूप से एस. ए. सी. से आते हैं अर्थात् वे ''संरचना'', ''अभिकरण'' एवं ''संस्कृति'' के मध्य के सम्बन्धों के द्वारा रचित होते हैं। ऐसा कुछ भी जो सामाजिक है के विश्लेषण हेतु इन तीनों के मध्य के सम्बन्धों को जानना अत्यावश्यक है।

परिभाषाओं को जानने की जरूरत में जाये बिना यह कहा जा सकता है कि ''संरचना'' एवं संदर्भ के बिना लोगों के चेहरे खालीपन व अनिश्चितता वाले हो जाते हैं। संस्कृति को यदि हटा दें तो कोई भी उन विचारों की रचना नहीं कर सकता जिन्हें स्थितियों का सामना करते समय व्यक्ति/लोग निर्मित करते हैं। अभिकरण के बिना हम 'सक्रियता–निर्भरता' के तत्व से अलग हो जाते हैं जो कि सामाजिक व्यवस्था/नियमन को बनाये रखने का महत्वपूर्ण कारक है। एक पेशे

>>

के रूप में समाजशास्त्र का कार्य इन सब की सम्बद्धता को जानना और इस सम्बद्धता से उभरे निर्माण को समझना है। विभिन्न टुकड़ों को तोड़ना और फिर उन टुकड़ों/अवयवों को पूरी तरह पाउडर में बदल देना अर्थात् सूक्ष्म तम कर देना एक ऐसा प्रयास है जिसे कर अनेक सामाजिक सिद्धान्तकारों ने अपने पेशे को पोस्टमार्टम करने वाला बना लिया है जो कि मृत्यु प्रमाण पत्र लिखकर एस. ए. सी. के हर तत्व को तबाह कर रहे हैं। इस प्रकार की मृत्यु/मौतों के बावजूद, विश्व का प्रत्येक भाग उन उपकरणों एवं साधनों से वंचित है जो यह विश्लेषण कर सकें कि वस्तुएं ऐसी क्यों है एवं वे पूर्व स्थिति से नितान्त भिन्न कैसे हो सकती हैं।

जहाँ 'संरचनाओं' का सवाल है, वर्तमान की 'वि–सांरचीकरण' की सैद्धान्तिक विधाओं ने उन्हें तीव्रता से प्रतिस्थापित किया हैं। तरलता के प्रत्यय ने सामाजिक के अनियन्त्रित होने के पक्ष को अन्ततः व्यक्त किया है। ''छोड़कर भागना'' (रन अवे), ''अस्तव्यस्तता'' (जगरनाट), एवं ''जोखम'' (रिस्क) समाज इसके अग्रदूत बने। इस तीव्रता ने और अधिक गति प्राप्त की है और जटिलता सिद्धान्त के कारण रेखांकित हुई स्व–संगठित प्रघटनाओं के व्यापक दायरे से ये बाहर आ रही हैं। परन्तु वर्तमान आर्थिक संकट के सम्मुख ऐसे उद्देश्यों के अर्थपूर्ण तर्क असफल साबित हो रहे हैं। इस संकट ने यह स्थापित किया है कि उन संरचनाओं को अब हम समझ रहे हैं जो पूर्व में चेतना स्तर पर उभरी नहीं थीं। आज हम वैश्विक वित्तीय पूंजी की संरचना एवं बहुराष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय सरकारों की इससे सम्बद्धता को जानते हैं जो सन् 2008 के पूर्व पूर्णतया पता नहीं थीं। सब कुछ जो मजबूत था अभी पूर्णतया पिघल कर हवा में घुलमिल नहीं गया है। परन्तु फोर्डवाद की तुलना में अवशिष्ट, उपमुख्य गिरवी, विदेशी विनिमय से व्यवहार तथा ऋण पर आधारित व्यापार को लोग ज्यादा समझते हैं।

चूँकि, संरचनात्मक स्थितियाँ, सम्बन्ध एवं हित वास्तव में जटिल हैं, अतः मीडिया ने इस संकट को या तो गैर महत्वपूर्ण अथवा निजी बना दिया है। बैंकर्स के बोनस एवं कुछ लालची नियोजकों/प्रधानों को हटाना जैसे मुद्दे इसके प्रमाण हैं। 'आक्युपाई आन्दोलन' उपयुक्त समाजशास्त्री उपकरणों की अनुपस्थिति को दर्शाता है। क्या वे मितव्ययिता के उपायों का विरोध कर रहे हैं अथवा वैश्विक वित्तीय पूंजीवाद का विरोध कर रहे हैं? आज जबकि लन्दन अनिश्चित प्रतीत होता है, जेनेवा आन्दोलन नियमित रूप से सेमीनार का आयोजन करता है ताकि उभरी हुई जटिलताओं को समझा जा सके। विभिन्न विधाओं से जुड़े अर्थशास्त्रियों के संगठन इस दिशा में समाजशास्त्रियों की तुलना में अधिक मददगार साबित हो रहे हैं। अर्थशास्त्र के क्षेत्र में पिछले दस नोबल पुरस्कार विजेताओं के अहितकारी या हानि पहुँचाने वाले योगदानों का मूल्यांकन जिस प्रकार स्टेफानों जमाग्नी (Stefano Zamagni) ने किया है के समकक्ष कोई मूल्यांकनकर्ता हमें समाजशास्त्र में नहीं मिलता। नागरिकीय अर्थव्यवस्था को व्यक्त करने में अथवा उसे स्थापित करने में हमारा योगदान क्या रहा है?

यह स्थिति हमें ''संस्कृति'' की ओर उन्मुख करती है तथा टी आइ एन ए (देयर इज नो आल्टरनेटिव टु कैपीटलिज्म) अर्थात् पूंजीवाद का कोई विकल्प नहीं है की विस्तृत भूमिका को रेखांकित करती है जिसका प्रयास है कि 'व्यापार पूर्व की भाँति ठीक है' के विचार को पुनः स्थापित किया जाय। 'सांस्कृतिक मोड़' एक विशेष विमर्श है पर इससे संकट को इधर उधर नहीं किया जा सकता। विमर्श की प्रमुख उपस्थिति ने विचारधारा की अवधारणा को विस्थापित किया है इसे पूर्ण रूपेण बिखेर देना एक 'मजबूत विविधता मूलक; वर्ग की रणनीति है। परिणामस्वरूप वैधता परक राजनीति की तरह विचार एवं हितों के मध्य का गठजोड़ भी बिखर गया है। इसके साथ ही आलोचना के आदर्शात्मक स्त्रोत जो कि अभिव्यक्तिमूलक क्रियाओं (जिनकी संख्या बहुत है) के भी स्त्रोत थे एवं सामाजिक संक्रियकरण के संसाधन (जिनकी अनुपस्थिति ने टी आई एन ए को सशक्त बनाया है) भी थे में तीव्र बिखराव हुआ है। यह विडम्बना ही है कि जैसे जैसे यह स्थिति चिन्ताजनक हो रही है, आदतों में स्वाभाविकता का विस्तार हो रहा है, स्थिति शून्य हैबीटास एवं नियमित (रूटीन) क्रियाएं समाजशास्त्र का भाग बन रही है। जबकि तीव्र परिवर्तन के साथ इनकी संगतता कम हो रही है। फिर भी जैसे महान अमेरिकन आशावादी पहली बार इन स्थितियों को सामने लाये थे, समस्यामूलक स्थितियाँ प्रत्यावर्तनीय नवाचार की स्थितियों से जुड़ी हैं।

निर्णायक रूप में एवं सर्वाधिक गम्भीर रूप में विषय की समाप्ति/मृत्यु का सवाल है, फोको (Foucault) ने 40 वर्ष पूर्व कहा था कि 'समुद्र के किनारे पर रेत में चेहरा धंसा लिया जैसी स्थिति पनप गयी हैं।'' मनुष्यत्व के रूप में हमारी गिरावट की चर्चा की पुनरावृत्ति हमारे विषय विशेषज्ञों ने की है। स्व–प्रतिबद्धता के लिए खुले रूप में व्यक्तियों के तर्क (Gergen) क्रम रूप से स्व के पक्षों की पुनः खोज (Beck) एवं अभिकरणीय ''कर्त्ता'' के रूप में अनवरत ह्रास के विचारों की इस संदर्भ में चर्चा की जा सकती है। विषय की समाप्ति के साथ, सौद्देश्यता, प्रत्यावर्तनीयता, देखभाल वाली दृष्टि (केयरिंग) एवं प्रतिबद्ध ता जैसे प्रत्ययों की समाप्ति भी हुई है। इसके साथ ही मनुष्य की उस विशिष्ट क्षमता की समाप्ति भी हुई है जो इस पक्ष को स्थापित कर सकती थी कि समाज किस प्रकार दूसरी प्रकृति का अथवा पूर्णरूपेण भिन्न प्रकृति का हो सकता है।

अब उन लोगों की संख्या बहुत कम है जो हमारी मानवीय जिम्मेदारियों एवं मानवीय सम्भावनाओं के पक्षधर हैं। फलस्वरूप एन्ड्रयू सेयर (Andrew Sayer) को एक उत्कृष्ट प्रकृति की पुस्तक 'व्हाइ थिंग्स मैटर टु पीपुल' (Why Things Matter to People) लिखने की आवश्यकता हुई। समाजशास्त्र का मानवतावादी दृष्टिकोण तो अब भी विद्यमान है परन्तु मानवीय मूल्यों के प्रति इसका दृष्टिकोण लगभग समाप्ति के कगार पर है। परिणामस्वरूप एकाकीपन एवं पृथक्करण अब लोकप्रिय विषय नहीं हैं अपितु तुलनात्मक रूप में सीमान्तीकरण एवं बहिष्करण अधिक लोकप्रिय हैं। ये लोकप्रिय विषय विकसित विश्व के द्वारा दण्ड स्वरूप निर्यात होकर व्यापक हुए हैं। समाजशास्त्री भी दुखों के प्रति हमारे शक को अपनी पूरी ताकत से उभार रहे हैं और समृद्धि/सुखों के पक्षों को अधिक महत्व नहीं देते। हम ''सुखों का समाज शास्त्र'' की चर्चा करते समय बहुत संकुचित हो जाते हैं और अपने आप को गैर विवादास्पद जैवकीय आवश्यकताओं की चर्चा तक सीमित कर लेते हैं। प्रसन्नता का समाजशास्त्र जैसी शाखा क्यों नहीं है। खुशी के विभिन्न पक्षों और समृद्ध सन्तुष्टि जैसे विषयों पर हम आंशिक ध्यान देते हैं और खुशी/खुशहाली के मापन को अर्थशास्त्रियों के हवाले कर देते हैं। इन सभी सवालों का उत्तर देना समाजशास्त्र का दायित्व है ताकि एक सम्पन्नता की ओर अग्रसर नागरिकीय समाज की परिभाषा निर्मित की जा सके।

आज का एक मुख्य विषय ''तरलीय आधुनिकता'' है परन्तु इसकी विशेषता अथवा विशेषण कुछ भी व्यक्त नहीं करते अपितु अनेक जगहों पर भ्रमित करते हैं (यान्त्रिक, सावयवी एवं सायवरनैटिक को याद करें जो इसके समकक्ष की तरह हैं)। परिवर्तन के कुछ विशिष्ट सिद्धान्त एस ए सी के केवल एक अवयव ''संस्कृति'' पर बल देते हैं ताकि ''सूचना समाज'' को जाना जा सके। ''संरचना'' के अवयव पर बल देते हैं ताकि ''वैश्विक पूंजीवाद'' अथवा ''साम्राज्य'' को जाना जा सके। तीसरे अवयव ''अभिकरण'' के माध्यम से ''संस्थागत व्यक्तिवाद'' जो कि ''प्रत्यावर्तनीय आधुनिकीकरण'' से समबद्ध है को समझा जा सके। प्रत्येक अवयव को एक ही पक्ष से सम्बद्ध किया जाता है (आनुभाविकता के आधार पर भी) और यह तर्क दिया जाता है कि यह अवयव सबसे अग्रणी है और इसे गलत तरीके से परिवर्तन की उत्पत्तिमूलक प्रणाली से जोड़ दिया जाता है। हमें इसके स्थान पर एस. ए. सी. की समिश्रितता एवं सकारात्मक फीडबैक के परीक्षण की आवश्यकता है जो सामाजिक पारिस्थितिकीय स्वरूप की रचना करते हैं। सामाजिक पारिस्थितिकीय स्वरूप की यह प्रक्रिया एक गैर विशेषाणात्मक तरीके से परिवर्तन की गहन होती प्रकृति को प्रस्तुत करती है। ■

> आईएसए का ऊपर उठना :
ईजाबेला से साक्षात्कार

वैश्विक संवाद के पिछले अंक (2.5) में हमने जाना कि किस प्रकार एक पॉलिश विद्यार्थी आईएसए में नियुक्त हुई और किस प्रकार वह परिषद के संगठनात्मक मस्तिष्क की अपरिहार्यता बन गई। साक्षात्कार के इस दूसरे व अंतिम भाग में डॉ. बार्लिन्सका हमें आइएसए के आज के एक शक्तिशाली संगठन के रूप में दृढ़ीकरण की कहानी बतला रही हैं।

इजाबेला बार्लिन्सका तथा आईएसए उपाध्यक्ष (शोध) मारग्रेट अब्राहम अगस्त 2012 में ब्यूनस आयर्स फोरम में एक गम्भीर विषय पर चर्चा करते हुए।

एम बी : हमने कहानी को आपके साथ एम्सटर्डम में प्रसिद्ध लेखक रिस्ज़ार्ड कैपुसिन्सकी के साथ दिलचस्प मोड़ पर छोडी थी। लेकिन तब 1986 के आखिर में आईएसए के तत्कालीन अध्यक्ष फर्नान्डो हैन्रिक कारडोसो ने आपको कार्यकारी सचिव (एक्सीक्यूटिव सैकेट्री) का पद प्रस्तावित किया था यदि आप मैड्रिड चल कर नये दफ्तर को स्थापित करें। और तब आपने ऐसा ही किया?

आइ बी : हाँ, मैं यहाँ मैड्रिड में जनवरी–1987 में आयी, अकेली ही, परन्तु मैं स्पेनिश का एक शब्द भी नहीं बोलना जानती थी। मुझे दफ्तर की स्थापना करनी थी। मेरा अनुमान है कि आपको इस तरह का कुछ करने के लिए युवा व अनुभवहीन होना पड़ेगा। जो कुछ भी करना था मेरे पास उसकी ज्यादा कल्पना नहीं थी। मैं वहां एक बड़े डिब्बे के साथ पहुंची जिसमें मेरे सूटकेस और आईएसए के कागजात थे और मुझे स्पैनिश एकेदमी आफ साईन्सेज में स्थान लेना था। आईएसए वहाँ स्पेन के शिक्षा मन्त्री के निमन्त्रण पर पहुँची थी लेकिन जो दफ्तर आईएसए को स्पैनिश एकेदमी आफ साईन्सेज में ग्रहण करना था वो तैयार नहीं था।

एम बी : आप अपने आप में पूरी तरह से निर्भर थीं?

आइ बी : सरजिओ कोन्ट्रेरास के रूप में मेरे साथ एकमात्र सहायक साथी था जो कि मान्ट्रीयल तथा एम्सटर्डम के सचिवालय में काम कर चुका था। वह मददगार बना क्यों कि वह स्पैनिश जानता था। हम दोनों दफ्तर खोलने की कोशिश कर रहे थे। यह मुश्किल था। मैंने स्पैनिश भाषा भवन बनाने वालों के साथ सीखी। लेकिन अच्छी बात यह हुई कि मैं शिक्षा मन्त्रालय के लोगों से परिचित हो गई क्योकि आईएसए को अधिकारिक रूप से रजिस्टर करवाने के लिए सारे कागजात तैयार करवाने थे। और क्योंकि सचिव स्तर के अधिकारी मेरे साथ स्पैनिश में बोलने में असमर्थ थे वे मुझे अपने उच्च अधिकारियों के पास जाने देते थे। इस प्रकार मैं समाजवादी सरकार के उच्च पदासीन व्यक्तियों को जानने लगी और उनसे मित्रवत सम्बन्ध स्थापित कर सकी। मैं उस पीढ़ी के मित्रों के साथ जो कि फिलिप गोन्जालेज के साथ सत्ता अधिग्रहित कर रहे थे, पहाड़ियों पर चढ़ने जाने लगी थी।

एम बी : पौलेण्ड से आने के कारण आप उनके लिए काफी जिज्ञासा का कारण रही होगीं?

आइ बी : उन दिनों पौलेण्ड बहुत प्रसिद्ध/चर्चित था। सत्तावादी शासन के खिलाफ लडाई की एक ताकत के रूप में सोलिडरेटी (Solidarity) के महत्व को हर कोई जानता था, जैसा कि वे लोग स्पेन में भी कर चुके थे। अतः पौलेण्ड, या कम से कम विपक्ष के लोगों की उन समाजवादियों के मध्य एक अच्छी इज्जत थी।

एम बी : अतः बुनियादी तौर पर आप अपने दम पर थीं। कारडोसो का कार्यकाल समाप्त हो गया था और तब मारग्रेट आर्चर आईं।

आइ बी : मारग्रेट 1986 की वर्ल्ड कांग्रेस में जो कि नई दिल्ली में हुई थी आईएसए की अध्यक्ष चुनी गयी थी। वह प्रथम और अब तक आईएसए की एकमात्र महिला अध्यक्ष थीं। हमने साथ–साथ काम किया और एक लम्बी चलने वाली मित्रता बनाए रखी।

एम बी : जब आप यहाँ आईं तब सबसे मुश्किल चुनौती क्या थी?

आइ बी : एक नये देश में दफ्तर स्थापित करने में समय लगा। कहने के लिए एक बार जब हम जम गये उसके बाद हम 1990 में मैड्रिड में आयोजित होने वाली वर्ल्ड कांग्रेस की तैयारियों में जुट गये, इसका मतलब था कि लेटिन अमेरिकन्स के बड़े दल की उपस्थिती जिसके परिणामस्वरूप स्पेनिश आईएसए की तीसरी भाषा बनी।

एम बी : क्या तब? मैं सोचता था कि यह 1982 में मैक्सिकों में हुआ था?

आइ बी : मैक्सिकों में विरोध का सामना हुआ था–हर कोई विरोध कर रहा था कि कांग्रेस स्पैनिश में नहीं थी। लेकिन स्पैनिश की मान्यता बहुत बाद में हुई। ऐसा लगता था कि एक नया महाद्वीप आईएसए में शामिल हो रहा हो इस तथ्य के साथ कि सचिवालय मैड्रिड में ले जाया गया है। हमारे पास कोई विशेष प्रौद्योगिकी नहीं थी–पहला कम्प्यूटर दफ्तर में आ चुका था लेकिन वह बिल्कुल अलग था। और यहाँ जो मुश्किल थी वो यह कि जबकि, मोटे तौर पर स्पैनिश स्थान और लोग कांग्रेस और एसोशिएशन के लिए सबसे अधिक मित्रवत थे, लेकिन कुछ ऐसे स्पैनिश लोग भी थे जो कि चाहते थे ..... मुझे किस प्रकार कहना चाहिए .... एसोशिएशन को अपने कैरियर और फायदे के लिए उपयोग करना चाहते थे और यह सब कुछ काफी अप्रिय बन गया था। मैं समझती हूँ कि आईएसए को नुक्सान हुआ। मैड्रिड कांग्रेस के अपने आप के बहुत तनाव थे न केवल इसलिए कि यह कोम्पलूटेन्से विश्वविद्यालय परिसर के तीन अलग अलग भवनों में आयोजित हुई थी, अपितु इसलिए भी कि उस वक्त मैड्रिड की उबलती हुई गर्मी में बिना किसी वातानुकूलन के।

एम बी : यह वही कांग्रेस थी जिसमें भारतीय समाजशास्त्री टी. के. ओमन को अध्यक्ष चुना गया था?

आइ बी : यह सही है। इस चुनाव के परिणाम आईएसए के लिए काफी मुश्किलें लाये क्योंकि कुछ स्थानीय समाजशास्त्रियों को उम्मीद थी कि कोई स्पैनियार्ड ही अध्यक्ष चुना जाएगा। इसका एक अप्रत्याशित परिणाम यह हुआ कि आईएसए को आन्तरिक मामलों के मन्त्रालय, जहां कि वह औपचारिक रूप से रजिस्टर्ड थी, के रजिस्टर से हटा दिया गया तथा हमें स्पैनिश अकेडमी आफ साइन्सेज के दफ्तरों से निकाल दिया गया। अतः कुछ समय के लिए दफ्तर को इसी छत पर विस्थापित किया गया जहाँ हम अभी बातचीत कर रहे हैं।

एम बी : इस प्रकार आईएसए को एक बार फिर से स्थानान्तरित किया गया–इसे किस प्रकार हल किया गया?

आइ बी : ठीक, हम बहुत भाग्यशाली थे कि विश्वविद्यालय कोम्पलूटेन्से के राजनीति विज्ञान और समाजशास्त्र संकाय ने बहुत ही उदारता पूर्वक हमें एक कार्यालय भवन की पेशकश की। मिगुएल एन्जल रूईज डे अजूआ (Miguel Ángel Ruiz de Azúa), जो कि उस समय नेशनल यूनियन आफ सोशियोलोजिस्ट्स एण्ड पोलिटीकल साईन्टिस्ट्स के अध्यक्ष थे का सहयोग अनमोल था। यह कदम इस मायने में अच्छा था कि सचिवालय का विश्वविद्यालय में होना अच्छा रहता है। यहाँ पर अधिक साथी–समाजशास्त्री, विद्यार्थी और एक सक्रिय शैक्षणिक परिवेश होता है।

एम बी : लेकिन आर्थिक रुप से आईएसए कैसे बचा?

आइ बी : आपको समझना होगा कि आईएसए यहाँ स्पेन के शिक्षामन्त्री के निमन्त्रण पर पहुंचा था तथा समझौता था कि सचिवालय को स्पेन की सरकार से अनुदान के रूप में धन उसी प्रकार मिलता रहेगा जैसा कि हमें मान्ट्रीयल और एम्सटर्डम में मिलता था। और इसी प्रकार यह स्पेन में भी छः साल तक चलता रहा। स्पेन की सरकार बहुत उदार थी। लेकिन तब वह धन बीत चुका था और आईएसए में इस पर बड़ी भारी चर्चा हुई कि अब क्या किया जाए? ऐसा नहीं था कि हमारे पास अन्य कोई प्रस्ताव हमारी सहमति की प्रतीक्षा कर रहा हो। लगभग उसी समय इन्टरनेट आया, ई–मेल आयी। हर एक ने महसूस किया कि वास्तव में इस बात का कोई फर्क नहीं पड़ता कि आय कहाँ पर हैं। इस प्रकार बजाय कहीं और जाने के यह तय किया गया कि हम यहीं स्पेन में ही रहेंगे और हम वहीं रहे। लेकिन आप को बता दूँ कि तब से आईएसए पूरी तरह से स्ववित्त पोषित है।

>>

एम बी : यह प्रभावशाली है!

आइ बी : इसका कारण था अच्छी हाऊसकीपिंग तथा बहुत ही सीमित कर्मचारी। निःसन्देह उन दिनों गतिविधियां कम थी और सदस्य भी कम थे। लेकिन यह आइएसए की जिन्दगी में एक बड़ा परिवर्तन था कि हमने हर चार साल में दफ्तर बदलना बंद कर दिया था।

एम बी : इसका यह मतलब भी हुआ कि आप अपना कर्मचारीदल भी बना सकते थे।

आइ बी : हाँ, वास्तव में। नाचो (जोस् इग्नासियो रेग्युएरा) 1990 की कांग्रेस के पहले से ही हमारे साथ हैं। मैं उससे अपने पौलिश सम्बन्धों के माध्यम से मिली थी। जब हम एकादमी आफ साईन्सेज में थे उन दिनों मेरे पास एक छोटी फीएट कार थी, जिस पर पौलिश रजिस्ट्रेशन की प्लेट थी। एक दिन मैंने उसकी खिड़की के शीशे पर एक छोटा सा नोट पाया जो कि पौलिश में था : ''मैं पौलेण्ड के इन्स्टीट्यूट आफ फिजिक्स में विजिटिंग प्रोफेसर हूँ; शायद हम मिल सकते हैं।'' मैंने कहा क्यों नहीं। वह जासेक कार्वोवस्की निकले जो कि तोरन विश्वविद्यालय में प्रोफेसर थे। हम तत्काल ही मित्र बन गये। उनके, उनके मित्रों तथा उनके परिवार के साथ हम स्पेन देखने निकल पड़े क्योंकि, यह नहीं भूलें कि उस वक्त तक, मैंने यही सोचा था कि मैं स्पेन में केवल चार साल तक ही हूँ। इस प्रकार मैंने नाचो को पाया जो कि उसी भौतिकी संस्थान में काम करता था।

एम बी : और वही आईएसए में व्यक्तिगत कम्प्यूटर, ई मेल तथा इन्टरनेट की दुनियां ले कर आया?

आइ बी : नाचो आईएसए के लिए आंकडों का आधार (डाटाबेस) तैयार करते आ रहे हैं। वह सभी कुछ जानते हैं। वह बहुत ही अच्छे, वफादार, देखभाल करने वाले तथा रचनात्मक व्यक्ति हैं। आईएसए के लिए वह महत्वपूर्ण उपलब्धि है, विशेष तौर पर कम्प्यूटरों तथा सोशल मीडिया के इस आधुनिक युग में। मैं उन्हें आवश्यकताओं के बारे में बतलाती हूँ और वह उन्हें उपलब्ध करा देते हैं। हम एक ही तरंगदैर्य पर हैं।

एम बी : शायद, यह सही समय हैं कि आप सचिवालय के दैनिक कामकाज के बारे में कुछ बतलाऐं?

आइ बी : रोजमर्रा की दिनचर्या एक थकाने वाली प्रक्रिया है, बहुत सारे विवरणों के साथ। लेकिन जैसा कि वे कहते हैं, शैतान विवरणों में ही होता है। यह सुनने में उबाऊ हो सकता है लेकिन इसी के साथ आपको अपना परिप्रेक्ष्य नहीं खोना चाहिये।

एम बी : कौनसा परिप्रेक्ष्य.....

आइ बी : एसोसिएशन का, इसे कहाँ जाना चाहिये तथा लोग क्यों हमसे सम्पर्क करते हैं, भले ही वह सिर्फ पता बदलने के लिए हो। लेकिन उस पते का नवीनीकरण करना महत्वपूर्ण है क्योंकि आने वाले दिनों में हम किसी दूसरे साथी का अनुरोध पा सकते हैं जो कि एक दिलचस्प सारांश संक्षेप, जो कि उसने आईएसए की वेबसाईट पर देखा था, के लेखक से सम्पर्क करना चाहता है।

एम बी : आप हरएक को हरएक के सम्पर्क में डाल रहे हैं।

आइ बी : सच में, यह एक परस्पर विनमय का नेटवर्क है जो कि बहुत से वर्षों के दैनिक कामकाज से निर्मित हुआ है। अब इस डेटाबेस में 5000 सक्रिय सदस्यों तथा 3000 अन्य सदस्यों के सम्पर्क सूत्र हैं और इसमें 60 से उपर शोध समितियाँ, कार्य समूहों, एवं विषय आधारित समूहों, 60 राष्ट्रीय समाजशास्त्रीय ऐसोसिएशनों, तथा संस्थागत सदस्यों की एक जटिल संरचना हैं। इसमें विपुल सम्भावनाएँ हैं तथा यह महत्वपूर्ण है कि इनका इस्तेमाल हो तथा इसे ठीक ढंग से रखा जावे।

एम बी : इससे आपका क्या अभिप्राय है?

आइ बी : आईएसए की कार्यकारिणी समिति एसोसिएशन के लक्ष्यों तथा नीतियों को परिभाषित करती है तथा सचिवालय उन्हें लागू करता है। यह भी याद रखना होता है कि हमारे अधिकांश सदस्य मूलतः अंग्रेजी बोलने वाले नहीं है इसलिए हमें आईएसए की वैबसाईट के निर्माण में संदेशों को तैयार करते समय बहुत सावधानी रखनी होती है। यह जितनी अधिक तकनीकी रुप से परिष्कृत होती जाती है उसको उन देशों में ढूढना उतना ही मुश्किल होता जाता है, जहाँ बिजली की आपूर्ति सीमित है। किसी को भी इन भिन्नताओं तथा असमानताओं के बारे में नहीं भूलना चाहिये। यह वास्तव में बहुत ही विशेष अनुभव है कि हम मैड्रिड में हमारे छोटे से दफ्तर में बैठ कर काम कर रहे हैं लेकिन यह सारी दुनियाँ के लोगों से घिरा हुआ है। दूसरे लोगों की मदद करने की क्षमता की जागरूकता हमारे लिए बहुत मूल्यवान है।

एम बी : ठीक! तो यहाँ कितने लोग हैं?

आइ बी : कुल चार; कुछ अंशकालिक तथा कुछ पूर्णकालिक और यद्यपि हममें से प्रत्येक की कुछ विशेष जिम्मेदारियाँ है (जैसे कि सदस्यता शुल्क भुगतान, डाटाबेस तथा वेबसाईट का नवीनीकरण, कान्फ्रेन्स कार्यक्रमों की घोषणा आदि) हम भाग्यशाली हैं कि हम दुनियां भर के समाजशास्त्रियों के अर्न्तराष्ट्रीय नेटवर्क के निर्माण से सम्बन्धित दल का निर्माण कर पाये हैं।

एम बी : हाँ, और इस में आप अविश्वसनीय रूप से सफल रही हैं। आईएसए के अध्यक्षों की भी इसमें भूमिका रही होगी। अब हमें ऐतिहासिक अनुक्रम पर लौटना चाहिये। ओमन 1990 और 1994 के मध्य अध्यक्ष रहे थे और उनके कार्यकाल के दौरान आपको अपने दफ्तर को खोने की घटना का सामना करना पड़ा। और तब 1994 में बिलेफेल्ड कांग्रेस हुई जिसमें इमेन्युएल वार्ल्सटाइन को अध्यक्ष चुना गया।

आइ बी : इमेन्युएल के साथ आईएसए में एक बड़ा परिवर्तन आया क्योंक वह ऐसोसिएशन के रोजमर्रा के कामकाज में इन्टरनेट और ईमेल लाये थे; यह वो समय था जब कि यह सब कुछ पूरी दुनियाँ में शुरू हो चुका था। इमेन्युएल इसका प्रयोग करते थे तथा बहुत सक्रिय थे। उनके पास अच्छे विचार थे, वो अच्छे उद्देश्य के लिए इस काम को करना चाहते थे। आईएसए के लिए ये महत्वपूर्ण वर्ष थे और उनके साथ काम करना बहुत ही दिलचस्प था। लेकिन उससे पहले अच्छे दिन थे। मार्गेट आर्चर के दिनों में–जो कि स्थानीय परिस्थितियों के कारण कठिन थे – हमने फिर भी आईएसए जर्नल इन्टरनेशनल सोशियोलोजी तथा दुनियां भर के कनिष्ठ/युवा समाजशास्त्रियों के लिए प्रतियोगिता स्थापित की। इस प्रकार उस कठिन समय में भी नई चीजें शुरू की गईं जो कि बाद में भी जारी रहीं।

एम बी : मेरा अनुमान हैं कि यह एक चालाकी पूर्ण कार्य है–नई चीजें शुरु करना और पुरानी चीजों की निरन्तरता बनाए रखना।

आइ बी : यदि वे अच्छी हैं तो वे रहती हैं।

एम बी : इजाबेला, मुझे अपना साक्षात्कार देने के लिए आपको धन्यवाद। मैं जानता हूँ कि आप इस प्रकार सुर्खियों में रहने की कभी भी उत्सुक नहीं रहीं। आपने हमेशा पर्दे के पीछे से काम करने की कोशिश की है, लेकिन आईएसए के सदस्यों को आप को सुनकर अच्छा लगेगा, आपके और आईएसए के इतिहास के बारे में जानकर, तथा यह जानकर भी कि पिछले 25 वर्षों में क्या चलता रहा है। आप आईएसए के किसी भी अध्यक्ष से पूछ सकती हैं और वे सभी इसे खुले दिल से स्वीकार करेंगे कि आईएसए इजाबेला बार्लिन्सका पर कितना निर्भर करता है। अतः आईएसए के सभी – पूर्व, वर्तमान तथा भावी सदस्यों की तरफ से मैं आपको, जो कुछ भी आपने किया है और कर रही हैं, के लिए ईमानदारीपूर्वक धन्यवाद देता हूँ। ■

> मुस्लिम विश्व स्वतन्त्रता, विकास एवं ज्ञान की कमी से क्यों प्रताड़ित है?

रियाज हसन, इन्स्टीट्यूट ऑफ साउथ एशियन स्टडीज, नेशनल यूनिवर्सिटी ऑफ सिंगापुर

अर्नेस्ट गैलनर (1925–1995) : ''इस्लाम जो कि पश्चिम के तीन महान ऐकेश्वरवादों में से एक है आधुनिकता के सबसे करीब है।''

अपनी एक महत्वपूर्ण पुस्तक'मुस्लिम समाज' (मुस्लिम सोसायटी) में अर्नेस्ट गैलनर ने साहसिक रूप से कहा है कि ''सार्वभौमिकता, पवित्र पुस्तक के प्रति आस्थावाद, पराभौतिकीय समतावाद, पवित्र समुदाय में पूर्ण सहभागिता का विस्तार एवं सामाजिक जीवन का तार्किक व्यवस्थितीकरण वे स्पष्ट आधार हैं जो एक के साथ नहीं, कुछ के साथ नहीं अपितु समूचों के साथ जुड़ा है इस पक्ष के साथ इस्लाम, पश्चिम के तीन महान एकेश्वरवादी धर्मों की भाँति, आधुनिकता के अत्यधिक समीप है (गैलनर, 1983:7)। गैलनर का यह भी मत है कि यदि अरब के लोगों ने पोयटीयर्स पर जीत हासिल की होती और लगातार जीतते जाते एवं यूरोप का इस्लामिक स्वरूप उभरता तब हम सब इब्ने वेबर को प्रोत्साहित करते कि वह 'द खरेजाइट ऐथिक एण्ड द स्प्रिट ऑफ कैपिटलिज्म' (The Kharejite Ethic and the Spirit of Capitalism) में यह निष्कर्ष बतायें कि नव्य–खरेजाइट पवित्रता वाद (प्यूरेटिनिज्म) ने किस प्रकार उत्तर यूरोप में अपने प्रभाव एवं परिणामों के फलस्वरूप उस आधुनिक तार्किक प्रवृत्ति की उत्पत्ति हुई जिसकी अभिव्यक्ति व्यापार/वाणिज्यिक गतिविधि एवं प्रशासन तन्त्र में अवलोकित होती है और यदि यूरोप ने ईसाइयत को रोका होता तो दीर्घकाल से चल रही अवांछनीयता के स्थान पर कौशल्यपूर्ण आकर्षक, संरक्षक केन्द्रित, अर्द्ध प्रकृतिवादी एवं विश्व के प्रति व्यवस्था विरोधी दृष्टि से निर्देशित आस्था नहीं उभरती (गैलनर 1983:7)

पर ऐसा कोई परिणाम नहीं उभरा। आज कोई भी अवलोकन कर्ता परेशानी/कठिनाई महसूस नहीं करेगा यदि उसे संयुक्त राष्ट्र एवं विश्व बैंक विकास प्रतिवेदनों में से बड़ी संख्या में वे आंकड़े एकत्रित करने हों जो मुस्लिम विश्व में स्वतन्त्रता की कमी को प्रस्तुत करते हों। इस स्थिति में इस कमी के कारणों से सम्बन्धित विवादित बहस को जन्म दिया है। समाज वैज्ञानिकों ने इस कमी के लिए इस्लामिक अन्ध विश्वास एवं संस्कृति, तेल, अरब–विशिष्ट संस्कृति एवं संस्थाओं, फिलिस्तीनी–इजरायल संघर्ष, 'रेगिस्तानी नियन्त्रण एवं संस्थाएं, निर्बल नागरिकीय समाज एवं महिलाओं की अधीनस्थता मूलक प्रस्थिति जैसे कारकों को सम्मिलित किया है।

> विकासात्मक कमी :

सबसे अधिक विवादास्पद बहस जो कि मुस्लिम विश्व में आर्थिक पिछड़ेपन एवं लोकतन्त्र में कमी इस कारक पर केन्द्रित है कि क्या इन दोनों कमियों के लिए इस्लाम मुख्य कारण है। आर्थिक पिछड़ेपन का जहाँ तक सवाल है, साक्ष्य स्पष्ट करते हैं कि 17वीं शताब्दी में यूरोप के विस्तार के उपरान्त शक्ति संतुलन में बदलाव के पूर्व, मध्य–पूर्व आर्थिक दृष्टि से यूरोप की भाँति गतिशील था। मुस्लिम व्यापारी अपने व्यवसाय एवं अपनी आस्था को विश्व के दूसरे देशों में उतनी ही सफलता से स्थापित कर रहे थे जितना कि यूरोपियन व्यापारी कर रहे थे। आर्थिक इतिहासकार अंगस मैडिसन (Angus Maddison) के अनुसार सन् 1000 में विश्व के कुल घरेलू उत्पाद (जी.डी.पी.) में मध्य पूर्व की साझेदारी यूरोप की तुलना में अधिक थी। यह सहभागिता अथवा साझेदारी क्रमशः 9 प्रतिशत यूरोप की तथा 10 प्रतिशत मध्यपूर्व की थी। सन् 1700 में मध्यपूर्व की साझेदारी घट कर केवल 2 प्रतिशत रह गयी जबकि यूरापे की साझेदारी बढ़कर 22 प्रतिशत हो गयी। पश्चिमी विद्वानों के अनुसार इस ह्रास का मानक विश्लेषण यह है कि इस्लाम वाणिज्यिक/व्यापारिक गतिविधियों का विरोधी है एवं ब्याज के उपयोग को प्रतिबन्धित करता है परन्तु यह विश्लेषण सन्तोष प्रद नहीं है क्योंकि इस्लामिक ग्रन्थों में व्यापारिक/वाणिज्यिक गतिविधियों

>>

के प्रति रूझान ईसाइयत ग्रन्थों की तुलना में ज्यादा है साथ ही ब्याज सम्बन्धी गतिविधियों के उपयोग के विषय में तोराह (Torah) एवं बाइबिल में व्यक्त दृष्टिकोण समान हैं।

पैगम्बर मौहम्मद साहब एवं उनकी पहली पत्नी खादिजा दोनों ही सफल व्यापारी थे। अनेक मुसलमान हालांकि पश्चिमी साम्राज्यवाद को अपने आर्थिक पिछड़ेपन का कारण मानते हैं अथवा उसे दोष देते हैं, परन्तु सवाल यह है कि एक समय विशेष में पनपी सशक्त सभ्यता पश्चिम के सम्मुख कैसे घुटने टेक गयी?

तुर्की–अमेरिकन अर्थशास्त्री तिमूर कुरन (2011) अपने सशक्त तर्कों से उपरोक्त विचारों एवं सम्बद्ध दृष्टिकोणों को अस्वीकृत करते हैं। अपने प्रभावी आनुभविक साक्ष्यों के आधार पर इनका मत है कि मध्य पूर्व में आर्थिक विकास की मन्द गति का कारण न तो उपनिवेशवाद है न ही भौगोलिक स्थिति और न ही इस्लाम एवं पूंजीवाद के मध्य असहयोग मूलक सम्बन्ध। इस मन्द गति का कारण व्यापारिक साझेदारी एवं वंशानुगतता से सम्बन्धित व्यवहारों से जुड़े हुए कानून हैं। इस्लाम के प्रारम्भ की शताब्दियों में इन संस्थाओं ने मध्य पूर्व की अर्थव्यवस्था को लाभ पहुँचाया परन्तु दसवीं शताब्दी के प्रारम्भ के आस पास इन संस्थाओं ने आर्थिक विकास को पीछे धकेलना प्रारम्भ किया क्योंकि इन्होंने आर्थिक जीवन के आधुनिक अवयवों जैसे निजी पूंजी संकेन्द्रण, निगम, व्यापक स्तर पर उत्पादन एवं अवैयक्तिक विनिमय के उद्भव को रोका या उन्हें धीमा किया। परिणामस्वरूप आर्थिक विकास को मन्द किया।

इस्लामिक साझेदारी, जो कि मुस्लिम व्यापारी वर्गों का मुख्य सांगठनिक आधार है, को एक पक्ष अपनी इच्छा के अनुसार समाप्त कर सकता था, यहाँ तक कि एक पक्ष की मृत्यु के उपरान्त सफल व्यापारिक प्रतिष्ठान की निरन्तरता समाप्त हो जाती थी। परिणामस्वरूप अधिकांश व्यवसाय लघु एवं अल्पकालिक चरित्र के रह गये। अधिकांश स्थायी एवं सफल व्यावसायिक प्रतिष्ठान मुस्लिम विश्व में स्थानीय गैर–मुस्लिम लोगों के द्वारा संचालित हैं। वंशानुगतता की प्रथाएं व्यावसायिक एकजुटता को बाधित करती हैं क्योंकि जब एक मुस्लिम व्यापारी की मृत्यु होती है तो उसकी सम्पत्ति जीवित पारिवारिक सदस्यों में विभक्त हो जाती है जो कि पूंजी संकेन्द्रण को रोकती है तथा लम्बे समय से जारी पूंजी केन्द्रित कम्पनियों को अवरूद्ध कर देती है। कुरान के अनुसार इस स्थिति के परिणामस्वरूप सांगठनिक स्थिरता/रूकावट मुस्लिम व्यावसायिक समुदायों का हिस्सा बनी और ये समुदाय पश्चिमी के व्यावसायिक समुदायों से प्रतियोगिता नहीं कर सके।

> लोकतान्त्रिक कमी :

हार्वड के अर्थशास्त्री ऐरिक चेनी (Eric Chaney) (2011) इस्लाम अथवा अरब की सांस्कृतिक विधाओं, तेल, अरब–इजरायल संघर्ष अथवा रेगिस्तानी पारिस्थितिकी जैसे कारकों पर आधारित सिद्धान्तों को लोकतान्त्रिक कमी के कारणों के लिए अस्वीकृत करते हैं। चेनी के अनुसार मुस्लिम–अरब विश्व में विद्यमान कुलीन तन्त्र लोकतान्त्रिक कमी को दर्शाता है जो कि यथार्थ है। अरब में अनेक शताब्दियों से चल रहे युद्धों ने नियन्त्रित करने वाली संरचनाओं को जन्म दिया जिनका दीर्घकालिक प्रभाव लोकतान्त्रिक कमी का मुख्य कारण है। नवीं शताब्दी में इस क्षेत्र के विभिन्न शासकों ने अपने सैन्य बलों के गठन हेतु देशज जनसंख्या के विपरीत दासों को सैन्य बल में स्थान दिया। दासों के इन सैन्य बलों ने शासकों को अवसर दिया कि वे स्थानीय सैन्य बलों एवं नागरिकीय समूहों से स्वयं को मुक्त कर सकें। इन दासों की सेनाओं ने पूर्व आधुनिक इस्लामिक समाजों में शासकों को सम्प्रभु बनाने में उत्पन्न हो सकने वलो समस्त अवरोध समाप्त किये। इस कुलीन तान्त्रिक परिवेश में शासकों की शक्ति पर निगाह रखने वाले एक मात्र समूह धार्मिक नेताओं से मिल कर बने। इस ऐतिहासिक संस्थागत ढाँचे ने शक्ति को दास सैनाओं के समर्थन से बनी सम्प्रभुता एवं धार्मिक अभिजनों के मध्य विभाजित कर दिया। परिणामस्वरूप लोकतान्त्रिक संस्थाओं की उत्पत्ति के पक्ष का परिवेश उत्पन्न नहीं हो सका। बजाय इसके धार्मिक एवं सैन्य अभिजनों ने मिल जुल कर काम करते हुए उस स्थिति को विकसित एवं गहन किया जिसे चेनी ''शास्त्रीय'' (क्लासिकल) संस्थागत सन्तुलन की संज्ञा देते हैं। यह सन्तुलन इस्लामिक कानून के रूप में जाना जाता है जिसे धार्मिक एवं सैन्य अभिजनों ने अपने हितों का विस्तार करने एवं सरंक्षण देने हेतु प्रयुक्त किया। दिखाने के लिए तो धार्मिक नेताओं ने यह स्थापित किया कि ''संतुलन मूलक संस्थाओं'' का कार्य साधारण जनता के हितों का संरक्षण करना है पर वास्तव में इस संस्थागत समग्र ने सदियों तक कुलीन तन्त्र को मजबूती दी। शासक दासों की सेना पर विश्वास करते थे जिसने उन्हें नागरिक संस्थाओं पर आश्रितता से मुक्ति दी। धार्मिक नेताओं ने सेना से सहयोग किया और एक ऐसी व्यवस्था का प्रारूप विकसित किया जो शक्ति के वैकल्पिक केन्द्रों का विरोध करे। शक्ति का यह संकेन्द्रण एवं कमजोर नागरिकीय समाज इस क्षेत्र में पनपी ऐतिहासिक संस्थागत तन्त्र की विरासत का परिणाम है जिसके कारण अरब सैनाऐं जीतती रहीं और सन् 1100 के बाद इस्लामिक कानून की निरन्तरता को बनाये रहीं।

इस्लामिक विश्व में सम्मिलित अनेक क्षेत्रों को बाद में गैर–अरबी मुस्लिम सैनाओं जैसे भारत एवं बाल्कान्स ने जीता। इन जगहों पर इस्लाम धर्मान्तरण के कारण फैला (जैसे इण्डोनेशिया, मलेशिया, सब–सहारा अफ्रीका) परिणामस्वरूप यहाँ क्लासिकल संस्थागत संरचना स्थापित नहीं हो सकी या उसे स्वीकारा नहीं गया। इन जगहों पर स्थानीय अभिजनों ने अपनी संस्थाओं को निरन्तरता दी व उन्हें आकार दिया जिसके फलस्वरूप उनकी सांस्कृतिक व राजनीतिक निरन्तरता बनी रही। परिणाम यह हुआ कि सन् 1100 एवं उसके उपरान्त अरब विश्व में एवं उस भूमि पर जहाँ अरब सैनाओं ने विजय प्राप्त की और जहाँ इस्लामिक शासन रहा लोकतान्त्रिक कमी एक दीर्घकालिक विरासत बन गयी। दूसरी ओर इस्लामिक विश्व में सम्मिलित वे इस्लामिक देश जहाँ गैर–अरब मुस्लिम सैनाओं एवं धर्मान्तरण के अवयव थे, लोकतान्त्रिक विकास पनपा और प्रगतिशीलता के पक्षों को स्थान मिला।

> ज्ञान की कमी :

सन् 2012 में विश्वविद्यालयों का विश्व में क्रमिक स्थान से सम्बन्धित 'टाइम्स हायर एज्यूकेशन' के सर्वेक्षण में 1.2 अरब की जनसंख्या या विश्व की कुल जनसंख्या के 17 प्रतिशत को सम्मिलित कर रहे 49 मुस्लिम बाहुल्य देशों के एक भी विश्वविद्यालय को विश्व के श्रेष्ठ 200 विश्वविद्यालयों में स्थान नहीं मिला। अनेक वर्षों से यह स्थिति निरन्तर बनी हुई है और एक चिन्ताजनक अकादमिक एवं बौद्धिक संकट की परिचायक है। दूसरी ओर विश्व की 5 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या को सम्मिलित करने वाले संयुक्त राज्य अमेरिका के 75 विश्वविद्यालयों को इस 200 विश्वविद्यालयों की श्रेष्ठता सूची में स्थान प्राप्त है।

इस संकट हेतु अनेक कारक उत्तरदायी हैं। पर सर्वाधिक महत्व पूर्ण कारण यह है कि मुस्लिम देशों में शोध एवं विकास के क्षेत्र में संसाधनों का बहुत कम आवंटन है। मुस्लिम देशों के संगठन (ओ आइ सी) का विज्ञान के क्षेत्र में बजट विश्व के अन्य संगठनों की तुलना में सबसे निम्न स्तर के निकट है। हाल के एक अनुमान के अनुसार, जो यूनेस्को एव विश्व बैंक के आंकड़ों पर आधारित है, ओ आइ सी देशों

का सन् 1996 से सन् 2003 तक शोध एवं विकास के क्षेत्रों में औसत वार्षिक निवेश कुल सकल घरेलू उत्पाद का 0.34 प्रतिशत है जबकि इसी अवधि में विश्व में निवेश का यह औसत 2.36 प्रतिशत रहा। ओ आइ सी के अनेक विशेषतः सर्वाधिक धनी देश विज्ञान एवं स्वास्थ्य की तुलना में हथियारों पर अधिक निवेश करते हैं। विश्व के 10 देशों में से 6 देश जो सैन्य साधनों पर सार्वजनिक कोष का सर्वाधिक व्यय करते हैं, ओ आई सी देश हैं। ये 6 देश कुवैत, जोर्डन, सऊदी अरब, यमन, सीरिया एवं ओमान हैं जो कुल सकल घरेलू उत्पाद का 7 प्रतिशत से अधिक हथियारों पर व्यय करते हैं। इन देशों में विज्ञान पर व्यय निम्नतम है। शिक्षा पर व्यय में भी अनेक उतार चढ़ाव हैं। सन् 2000 में मलेशिया, सऊदी अरब, यमन, मौरक्को, ट्यूनिशिया एवं ईरान उन 25 देशों में हैं जिन्होंने शिक्षा पर सर्वाधिक व्यय किया (बटलर, 2006)।

विश्व बैंक के अनुसार सन् 2002 में ''शिक्षा संकेतक'' (एज्यूकेशन इन्डेक्स) में जिन देशों की उपलब्धियाँ सबसे कम रहीं में 15 देश ओ आइ सी देश हैं इनमें अनेक अफ्रीकी देश, बाँगला देश एवं पाकिस्तान सम्मिलित हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी में कम निवेश निराशाजनक वैज्ञानिक आउटपुट के रूप में भी व्यक्त होता है। सन् 2003 में दस लाख (एक मिलियन) की जनसंख्या पर शोध आलेखों की औसत संख्या 137 थी। ओ आइ सी देशों में यह औसत मात्र 13 था। कोई भी ओ आइ सी देश इस विश्व औसत के अनुरूप नहीं था। यहाँ तक हुआ कि केवल तुर्की एवं ईरान को छोड़ कर 24 ओ आइ सी देशों ने जो शोध आलेख प्रस्तुत किये, जिनके आंकड़े उपलब्ध हैं, वे या तो अत्यन्त सामान्य थे अथवा उन्हें अस्वीकृत कर दिया गया। तुर्की में प्रकाशन की दर जो सन् 1988 में 500 थी सन् 2003 में 6000 पर पहुँच गयी। ईरान में दस वर्ष पूर्व जहाँ प्रतिवर्ष 100 पत्रों का प्रकाशन होता था, अब यह संख्या 2000 के निकट पहुँच गयी है।

इस स्पष्ट विश्लेषण का एक हिस्सा जो इन स्थितियों को व्यक्त करता है का सम्बन्ध शिक्षा तथा शोध एवं विकास (आर एण्ड डी) में अनुपयुक्त सार्वजनिक निवेश से हैं पर साथ ही इस वर्तमान स्थिति का एक महत्वपूर्ण कारण विद्यमान सांस्कृतिक एवं राजनीतिक व्यवहार प्रणालियाँ भी हैं। कोरिया, सिंगापुर, ताइवान, चीन एवं भारत जैसे देशों ने विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में महत्वपूर्ण छलांग लगायी है। फलस्वरूप आज ये सभी देश तीव्र गति से विकसित हो रही अर्थव्यवस्थाऐं हैं। उच्च शिक्षा के संस्थान, शक्ति प्राप्त कर रहे नागरिकीय समाज जो कि संस्थात्मक एवं विचारधारायी बाहुल्यता पर आधारित हैं, से दृढ़ता प्राप्त कर शक्ति एवं सत्य पर राज्य की केन्द्रीय संस्थाओं के दवाबमूलक पक्षों के विरूद्ध प्रतिरोध की भूमिका निभाते हैं तथा प्रति–सन्तुलन की स्थिति को स्थापित करते हैं। यह दुर्भाग्यजनक है कि मुस्लिम समाजों में ऐसा नहीं हो रहा है। अधिकांश मुस्लिम देशों में निर्बल एवं अल्प विकसित नागरिकीय समाजों की उपस्थिति है।

अनेक मुस्लिम समाजों में एक अन्य अवरोध भी उभार ले रहा है। धार्मिक कट्टरपन्थियों ने अपने दवाब में वृद्धि की है, उनके कट्टरवादी आन्दोलनों ने इस्लामिक विचार प्रणाली के उन पक्षों को अपना विवेचन दिया है जो आलोचनात्मक तार्किक विचार प्रणाली के विपरीत हैं। इस स्थिति के कारण उन विकासात्मक पक्षों पर नकारात्मक प्रभाव पड़ते हैं जो जीवन्त विश्वविद्यालयों की वृद्धि एवं विकास हेतु आवश्यक हैं। एक शक्तिशाली/प्रतिबद्ध नागरिकीय समाज उन देशों के विकास की पूर्व आवश्यकता है जो कठोर अभिमतों एवं विश्वासों के आतंक पर आधारित न होकर सन्देह/शंका एवं समझौता पर केन्द्रित व्यवस्थाओं के पक्षधर हैं। विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी केवल उन स्थितियों में ही समृद्ध होती है जो तर्क एवं प्रकृति के नियमों को विशेषाधिकार का हिस्सा बनाती है।

तीसरी औद्योगिक क्रान्ति की ज्ञान अर्थव्यवस्था में धन की उत्पत्ति मुख्यतः ''दिमागी उद्योगों'' (ब्रेन इण्डस्ट्रीज) पर आश्रित होगी। ओ आइ सी देशों ने बहुत कम पेटेण्ट के उत्पादन किये हैं एवं उच्च प्रौद्योगिकीय उत्पादों के निर्यात में वे सर्वाधिक निचले स्तरों में स्थान पाते हैं। ये वैज्ञानिक, प्रौद्योगिकीय एवं बौद्धिक स्थितियाँ दूरगामी सामाजिक आर्थिक प्रभावों को जन्म देती हैं। मुस्लिम देशों में बौद्धिक ठहराव ने मानव जनसंख्या के एक बढ़े भाग को स्थायी रूप से अधीनस्थता की स्थिति में कैद कर दिया है। यह अत्यावश्यक है कि अकादमिक उत्कृष्टता को सृजित व विकसित करने वाली स्थितियों को समर्थन व सहयोग दिया जाय तथा ऐसी रणनीति बनायी जाय जिससे उच्च शिक्षा के ह्रास को रोका जा सके। मुस्लिमों की भावी पीढ़ी की सम्मान के साथ अस्तित्व की निरन्तरता हेतु यह स्थिति उत्पन्न होनी ही चाहिए। आज के मुस्लिम देशों की सरकारों के सम्मुख यह सबसे गम्भीर चुनौती है।

अरब देशों में जागरण हेतु इस स्थिति के क्या परिणाम हैं? क्या इतिहास भाग्य केन्द्रित है? कुछ ऐसे आशावादी विकास अरब विश्व में हो रहे हैं जो बताते हैं कि अरब विश्व कुलीनतन्त्रवादी अतीत को छोड़ रहा है। इस क्षेत्र में संरचनात्मक परिवर्तन हो रहे हैं जैसे शिक्षा स्तर में वृद्धि एवं पिछले 60 वर्ष में हुआ नगरीयकरण एवं औद्योगिकरण जिसने इतिहास में पहली बार लोकतान्त्रिक परिवर्तनों के लिए अनुकूल एवं स्वीकार्य परिवेश उत्पन्न किया है। सन् 2011 से अरब विश्व में उभरी बदलाव व जागरण की लहर इस क्षेत्र के इतिहास में अप्रत्याशित है। यह लहर मिस्त्र एवं यमन जैसे देशों में उभरे राजनीतिक संतुलन को सम्मिलित नहीं करती पर यह ऐतिहासिक संतुलन के समकक्ष है। दूसरी और तुर्की, अल्बानिया, बांग्लादेश, मलेशिया एवं इण्डोनेशिया इतिहास को अरब देशों की तुलना में झुठला रहे हैं लेकिन यहाँ पर भी निर्बल नागरिकीय संस्थाएं एवं निर्धनता लोकतान्त्रिक परिवर्तन में बाधक हैं। ■

संदर्भ :

Butler, D. (2006) "The Data Gap: Statistics on scientific investment and performance are lacking across the Muslim world." *Nature*, vol. 444: 26-27.

Chaney, Eric. (2011) *Democratic Change in the Arab World, Past and Present*. Harvard University Department of Economics and Brookings Institute.

Gellner, E. (1983) *Muslim Society*. Cambridge: Cambridge University Press.

Kuran, T. (2011) *The Long Divergence: How Islamic Law Held Back the Middle East*. Princeton: Princeton University Press.

> हसन को प्रत्युत्तर :

कमी की जटिलता को सीमित करना

मुहम्मद ए. बामेह, पिट्सबर्ग विश्वविद्यालय, संयुक्त राज्य अमेरिका एवं इन्टरनेशनल सोश्योलोजी रिव्यू ऑफ बुक्स

मैक्स वेबर (1864–1920). ''मैक्स वेबर के समय से ही यह प्रश्न कि क्यों दुनियां में अन्य लोग यूरोप की तरह नहीं हो पाये, अवधारणात्मक रुप से स्पष्टता प्राप्त करने के बजाय खोये ही हैं।''

हर किसी को यह स्पष्ट होना चाहिये कि ''स्वतन्त्रता'', ''विकास'' एवं ''ज्ञान'' की कमी अपने आप में विशिष्ट अव–धारणायें हैं। ये अवधारणायें जटिल भी हैं। कोई इन का कैसे मूल्यांकन करें का पक्ष इस तथ्व पर आधारित है कि वह इन्हें कैसे परिभाषित करता है। साथ ही इस पक्ष में अनेक भिन्नताएं भी आ सकती हैं। किसी भी एक लघु आलेख में इन में से एक भी अवधारणा की सन्तोषप्रद विवेचना करना काल्पनिक ह। समस्त अव–धारणाओं का उल्लेख एक छोटे आलेख में तो अत्यन्त कठिन है और उसमें भी दस शताब्दियों एवं समूचे मुस्लिम विश्व की चर्चा को सम्मिलित करने का प्रयास सम्भव नहीं हैं इस कारण यह आश्चर्यजनक नहीं है कि रियाज हसन अपने आलेख में कुछ भी नवीन प्रस्तुत नहीं कर सके और दुर्भाग्यवश समूचे विवेचन को विभ्रम का हिस्सा और बनाते गये। रियाज हसन ने यह असफल प्रयास उस क्रान्तिकारी दौर में किया है जब नवीन परिप्रेक्ष्यों पर केन्द्रित विवेचन न केवल अत्यावश्यक हैं अपितु सम्भव भी हैं। मुस्लिम समाजों, आन्दोलनों एवं संस्थाओं की वर्तमान समाजशास्त्रीय एवं मानवशास्त्रीय ज्ञान विधाओं की प्रचुर उपलब्धता के आधार पर ये परिप्रेक्ष्य प्रस्तुत किये जा सकते हैं।

इस नवीन साहित्य को संदर्भ बनाये जाने, जैसा कि कोई अपेक्षा करेगा, के स्थान पर हसन ने उन दृष्टिकोणों को पुनर्जीवित किया जो अनेक बार स्वयं को प्रमाणित कर चुके हैं और अब पुराने हो गये हैं। यदि इन दृष्टिकोणों को प्रारम्भ करें तो वेबर का यह सवाल कि विश्व में अन्य लोग यूरोप की तरह क्यों नहीं हो गये अब अवधारणात्मक स्पष्टतया ग्रहण करने के स्थान पर अपने महत्व को अप्रासांगिक बना चुका है। यह प्रश्न इस पक्ष के साथ प्रारम्भ नहीं होता कि कैसे विभिन्न समाज नागरिकीय व्यवस्था के विभिन्न प्रकार्यात्मक स्वरूपों को विकसित कर पाये हैं। इस पक्ष को यदि जानने का प्रयास करें तो हम वास्तव में बहुत कुछ सीख सकते हैं। इन प्रश्नों/पक्षों को जानने के लिए ''समस्या'' के रूप में विश्लेषित करना अपेक्षित नहीं हैं क्योंकि ये प्रश्न/पक्ष यूरोप की भाँति नहीं हैं। यदि हम इन्हें वैध प्रश्नों के रूप में मान्यता दे भी दें तो इनके सम्भावित उत्तर, जैसा कि हसन तर्क देते हैं, विविध प्रकृति के हो सकते हैं और इसलिये इन्हें सावधानीपूर्वक, धीरजपूर्वक एवं वैचारिक बाहुल्यता के साथ परखने की जरूरत है। उदाहरण के लिए जब मुस्लिम विश्व के सामाजिक इतिहास इस तथ्य को भली भाँति जानते हैं कि इस्लामिक आर्थिक कानूनों का भिन्न भिन्न तरीकों से अनुकरण किया गया, साथ ही इन कानूनों की खुले आम अवहेलना भी की गयी। कभी कभी तो धार्मिक प्रतिष्ठानों ने स्वयं इन अवहेलनाओं की खुले आम अनुमति दी। यह स्वीकारना कठिन है कि तिमूर कुरन इस्लामिक अर्थशास्त्र के समूचे इतिहास की उपयुक्त विवेचना करता है। इस्लामिक कानून का विषय–पाठ एवं उसके सरल अवलोकन के द्वारा यह नहीं जाना जा सकता कि इसे कैसा लागू किया गया (या लागू नहीं किया गया) या इसे कैसे व्यवहार में लाया गया (या नहीं लागा गया)। यह संदर्भ अत्यन्त महत्व–पूर्ण है क्योंकि विभिन्न समयावधियों में भिन्न भिन्न किस्म के परिवेश उपस्थित थे (अधिक व्यवस्थित, बाहुल्यतामूल एवं सरल विवेचना हेतु देखें: ग्रान, आबू–लगहोड, औवेन एवं अन्य अनेक) (Gran, Abu-Lughod, Owen, among many others)।

>>

मुस्लिम विश्व वृहद, पुराना, जटिल एवं व्यापक रूप में विविधता लिये हुए है। जो लोग एक इकाई के रूप में विश्व का आनुभविक अध्ययन करने में रूचि रखते हैं को पता है कि जिन तथ्यों/आंकड़ों को वे एकत्रित करेंगे उतना ही विविधताओं/भिन्नताओं को प्रस्तुत किया जा सकता है। उदाहरण के लिए मोताज फताह (Moataz Fattah)(2008) ने जब विश्व पैमाने पर मुसलमानों की लोकतन्त्र के प्रति अभिवृत्ति का अध्ययन किया तो उन्होंने पाया कि मुस्लिम विश्व भिन्न भिन्न प्रकृति के परिवेशों को सम्मिलित करना है। मेरी दृष्टि में किसी भी अध्ययन की शुरूआत इस विचार से होनी चाहिए। हसन स्वयं साक्ष्यों का हवाला देते हुए मुस्लिम विश्व को विविधता–मूलक बताते हैं और कहते हैं कि वह स्वयं इसका परीक्षण करते समय इसे एक संगतता मूलक इकाई के रूप में नहीं स्वीकारते, पर आश्चर्य है कि उनके द्वारा प्रस्तुत विश्लेषण में यह विचार कोई प्रभाव व्यक्त नहीं करता। यह भी उतना ही आश्चर्यजनक है जब हसन यह तर्क स्थापित करते हैं कि इस्लाम किसी न किसी रूप में ज्ञान की कमी/घाटे के साथ या तो सम्बद्ध है या उत्तरदायी है। जबकि हसन इस प्रवृत्ति के अपवाद के रूप में हाल के दो उदाहरणों (इरान एवं तुर्की) की चर्चा करते हैं। इन अपवादों का विश्लेषण प्रस्तुत नहीं किया गया है। हसन की समूची रूपरेखा में वृहद स्वरूप को कहीं भी समर्थन नहीं मिलता केवल सरलतामूलक दावों की चर्चा की जाती है।

और जब हमारे पास बहुत प्रभावी साक्ष्य हों जो बताते हों कि आर्थिक सम्भावनाओं में आधारभूतीय बदलाव यूरोप की दिशा की तरफ न केवल मुस्लिम विश्व में हुआ अपितु समूचे औपनिवेशिक विश्व में हुआ और यह बदलाव निर्णायक प्रकृति का था। हसन इन स्वीकृत साक्ष्यों को सामान्य/सरल तरीके से उद्धृत करते हैं पर उसका विवेचन नहीं करते जो उन लेखकों से सम्बद्ध हैं जिनकी दृष्टि में यह विचार है कि हर किसी घटना/पक्ष के लिए उपनिवेशवाद को दोषी नहीं ठहराया जा सकता। जब अन्य साक्ष्य, लोकतान्त्रिक सम्भावनाओं को लेकर मुस्लिम विश्व में विविधताओं को प्रस्तुत करते हैं, हसन इस विविधता को ऐरिक चेनी की एक बड़े विवादों से घिरी स्थापना के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं। इस स्थापना के अनुसार मुस्लिम विश्व में लोकतान्त्रिक कमी/घाटे के लिये अरब राजनीतिक संस्कृति एवं अरब सामाजिक संरचनायें उत्तरदायी हैं। यह आश्चर्यजनक है कि यह स्थापना (एक अचानक अटपटे ढंग से समाप्त होने वाले ऐतिहासिक विवेचन के द्वारा इसे समर्थन दिया गया है जिसे चेनी के माध्यम से हसन के विचारों के विपरीत रूप में पढ़ा जा सकता है) अरब देशों में लोकतन्त्र की कमी की सक्षम व्याख्या के रूप में स्वीकारी गयी है। एक ऐसे समय में जब आधुनिक इतिहास में अरब विश्व महानतम लोक तान्त्रिक क्रान्तियों का गवाह बना है। सन् 2001 के बाद लोकतान्त्रिक अभिवृत्तियों के विषय में किसी भी वैश्विक जन मत सर्वेक्षण की चर्चा किये बिना यह उल्लेख किया गया है जिसमें लोकतन्त्र की आधारभूत विशेषताओं के प्रति मुसलमानों की निकटता/लगाव को दर्शाया गया हो। उदाहरण के लिए गैलअप (Gallup) जनमत सर्वेक्षणों की श्रंखला का उल्लेख किया जा सकता है जिसमें मुस्लिम बहुमत वाले देशों, जहाँ विश्व के कुल मुसलमानों का 80 प्रतिशत निवास करता है, में राजनीतिक स्वतन्त्रता, स्वाधीनता, भेदभाव रहित न्यायिक प्रणाली, अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता एवं अन्य मुख्य संकेतकों के प्रति गहरा समर्थन है। लोकतन्त्र एवं स्वतन्त्रता के प्रति मुसलमानों की अभिवृत्ति अन्य से विशेषतः अमेरिकन उत्तरदाताओं की अभिवृत्ति से आंशिक रूप में भिन्न है (देखें ऐस्पोसिटो एवं मोगाहद, Esposito and Mogahed, 2008)। इन सब साक्ष्यों की उपेक्षा अत्यन्त कमजोर तरीकों से परिभाषित स्थापनाओं के लिए अत्यन्त कमजोर आनुभाविक साक्ष्यों को प्रस्तुत करते समय की गई है।

सब मिला कर यह कह सकते हैं कि जब कोई ऐतिहासिक परम्पराओं के साथ आधुनिक स्थितियों की विवेचना करता है तो उसे अत्यन्त सावधान/सजग होकर उन तरीकों को प्रस्तुत करना चाहिए जिनके साक्ष्य उपस्थित नहीं हैं। उदाहरण के लिए जो लोग 13वीं शताब्दी में निवास कर रहे थे को उन उदारवादी मूल्यों के प्रति प्रतिबद्धता में कमी हेतु कैसे दोषी ठहराया जा सकता है जिन्हें हम आज जिस रूप में समझते हैं। लेकिन उन्हें उन संदर्भों के साथ मूल्यांकित किया जाना चाहिए कि उनके लिए किसने क्या सक्रियता दिखाई। आधुनिकता की उपस्थिति न होने तक (हालांकि हम इसकी समयावधि निर्धारित करते हैं) मुसलमानों एवं गैर मुसलमानों के लिए सामाजिक व्यवस्था संतुलन का प्रश्न उन पारस्परिक अहसानों की व्यवस्थाओं का प्रश्न था जो शताब्दियों में उभर कर आयी थीं। इस दौरान राज्य बहुत कम महत्वपूर्ण था जबकि आज उसका केन्द्रीय स्थान है (उदाहरण के लिये देखें लेपीडस (Lapidus) 2002)। अतः तथ्य यह है कि कुछ समूह, उदाहरण के लिये धार्मिक विद्वान, पुरानी नागरिकीय संस्कृतियों में अहम् भूमिकाओं का निर्वाह करते थे। पर आधुनिक लोकतन्त्र की विवेचना में ऐसे समूहों की अहम् भूमिकाओं को अर्थपूर्ण स्थान नहीं दिया जा सकता। यह विवेचन ज्यादा अर्थपूर्ण होगा कि किस प्रकार मुसलमानों ने उस लचीली एवं बहुस्तरीय संस्कृतियों को विकसित किया जिसने विभिन्न समयावधियों एवं विभिन्न परिस्थितियों में सामाजिक जीवन को संगठित किया।

यदि इतिहास हमारे समस्त विश्लेषकों में भूमिका का निर्वाह करता है तो हमें सरलतम प्रकृति के सूत्रों के स्थान पर समृद्ध ऐतिहासिक समाजशास्त्र की आवश्यकता होनी चाहिए। यदि समृद्ध ऐतिहासिक समाजशास्त्र को महत्व दें तो यह देखना होगा कि किस प्रकार मुसलमानों ने सदैव अत्यन्त विविधतामूलक/भिन्नतामूलक परिवेशों में अपने सामाजिक जीवन को अर्थ दिये एवं साथ ही कैसे उन्होंने ''सामाजिकता'' (आलिवियर रॉय (Olivier Roy) ने जैसा उल्लेख किया) के अर्थ के साथ धर्म को स्थापित किया। यह सामाजिकता मूलक धर्म अनेक महत्व पूर्ण स्वतन्त्रताओं एवं सैद्धान्तिक स्तर पर विविधता को सम्मिलित करता है व स्वीकारता है और समान प्रकृति की परम्पराओं की उपेक्षा करता है। मुसलमानों को बाहुल्यता को सीखने के लिए यूरोप की आवश्यकता नहीं थी। पर यह सिद्धान्त, जो कि विभिन्न प्रकारों की स्वतन्त्रताओं को सामाजिकता मूलक परम्पराओं में सम्मिलित करता है, अनेक शताब्दियों तक हर तरफ प्रतिमान के रूप में उपस्थित रहा, पर इस विषय पर विवेचन मुख्य रूप से तब प्रारम्भ हुआ जबकि यूरोप ''आधुनिक'' औपनिवेशिक प्रशासन के रूप में मुसलमानों के निकट आया। इस स्थिति के उपरान्त उत्तर औपनिवेशिक प्रकृति के मजबूत राज्यों की स्थापना हुई। यह सर्वसत्तावाद आधुनिक है न कि पुरातन।

इस समृद्ध ऐतिहासिक तस्वीर की समझ हमें एक अर्थपूर्ण ऐतिहासिक समाजशास्त्र प्रदान करती है जिसमें वर्तमान अभिवृत्ति के कुछ पक्ष भी उभार लेते हैं। पर यह मत व्यक्त करना सबसे कम उदाहरणमूलक है कि अतीत की स्थितियों ने लोकतान्त्रिक संस्कृति को विकसित नहीं होने दिया, या इन स्थितियों ने हमें लोकतान्त्रिक संस्कृति के लिये तैयार नहीं किया या फिर जल्दी ही हमें पूर्ण यूरोपियनों की तरह बनने नहीं दिया। इन तर्कों से पूर्णतया पृथक होना भी उपयुक्त नहीं है। ■

संदर्भ :

Abu-Lughod, J. (1989) *Before European Hegemony*. New York: Oxford University Press.

Esposito, J. and Mogahed, D. (2008) *Who Speaks for Islam? What a Billion Muslims Really Think*. New York: Gallup Press.

Fattah, M. (2008) *Democratic Values in the Muslim World*. Boulder: Lynne Rienner.

Gran, P. (1979) *Islamic Roots of Capitalism: Egypt, 1760-1840*. Austin: University of Texas Press.

Lapidus, I. (2002) *A History of Islamic Societies*. Cambridge: Cambridge University Press.

Owen, R. (1981) *The Middle East in World Economy: 1800-1914*. London: Methuen.

> हसन को प्रत्युत्तर : 'देशजतावाद/ आंतरिकतावाद' (ओरिएन्टलिज्म) की सीमायें

जैक्स इ. कब्बनजी, लेबनीज विश्वविद्यालय, बेरूत, लेबनान

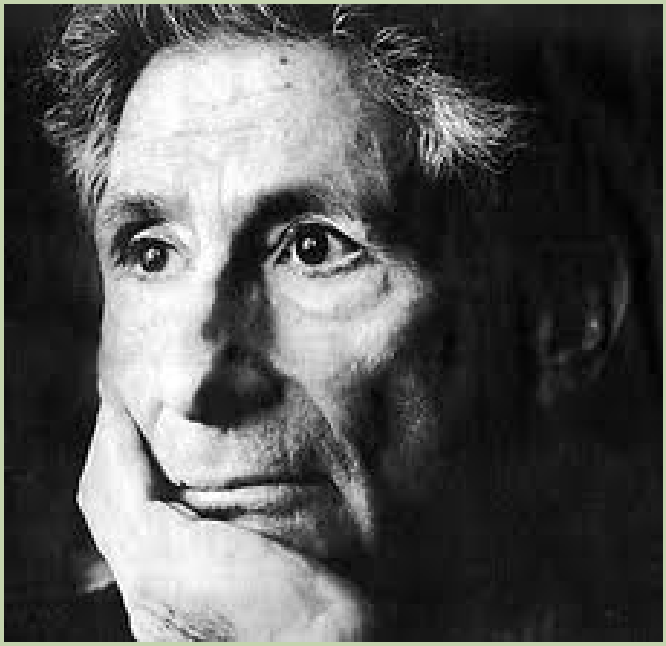

एडवर्ड सैड (1935–2003). ''जैसा कि सैड ने निर्मित किया है [...] पश्चिम आधुनिकता की तरफ खडा हुआ है, जबकि पूर्व अपने धर्मो से (विशेषकर इस्लाम से) और इसके इतिहास से संघर्ष कर रहा है।''

सन् 2010 के अन्त से अनेक अरब देशों के ग्रामीण व नगरीय क्षेत्रों में जन प्रतिरोध का उभार एवं फैलाव तेजी से हुआ है। हालांकि अभी इसके परिणामों पर भविष्यवाणी करना कठिन है पर एक तथ्य साफ हुआ है कि अरब विश्व की जनसंख्या एकतन्त्रीय शासन एवं सर्व सत्तावाद को अस्वीकृत करने के लिए एकजुट है। आंशिक रूप में ही सही पर उन्होंने यह व्यक्त किया है कि जनता ही निश्चित रूप से सामान्य राजनीतिक कर्ता है। हालांकि स्वाभाविकता इन जन प्रतिरोधों की विशेषता है पर ये प्रतिरोध सामाजिक एवं राजनीतिक दृष्टि से व्यापक हैं और इसलिए विशिष्ट हैं। जनता का उभार ''शक्तिहीनता की स्थिति'' से हुआ है जिसके लिए उन्हें अरब समाजों के अनेक विद्वानों की आलोचना का शिकार होना पड़ा है। इस स्थिति ने और साथ ही अन्य अनेक विशेषताओं ने इस्लाम एवं अरब समाजों के अध्ययनों में गहराई तक पैठ बना चुकी अकादमिक परम्पराओं को चुनौती दी है।

1960 के दशक के प्रारम्भ में इन परम्पराओं को 'देशजतावाद' (ओरिएन्टलिज्म) की संज्ञा दी जाने लगी। हालांकि यह शब्द 1978 में एडवर्ड सैड (Edward Said)की पुस्तक 'ओरिएन्टलिज्म' के प्रकाशन के उपरान्त विभिन्न भागों में फैला परन्तु यह विचार 1963 में अनवर आब्देल–मलिक (Anwar Abdel-Malek) के महत्वपूर्ण लेख 'ओरिएन्टलिज्म इन क्राइसेज' से उभार लेता है। 'देशजतावाद' उस बौद्धिक अभिवृत्ति की तरफ इशारा करता है जो देशज समाजों को पश्चिमी परिप्रेक्ष्य से मूल्यांकित करता है। उनके इतिहास एवं वर्तमान को अत्यन्त विशिष्ट/विलग एवं स्व–स्फूर्त रूप में समझा एवं विश्लेषित किया जाता है। एडवर्ड सैड की स्थापना है कि देशजतावाद सांस्कृतिक एवं आवश्यकतावादी संदर्भ में पश्चिम एवं पूर्व के मध्य अन्तर को व्यक्त करता है। पश्चिम आधुनिकतावाद की तरफ खड़ा है जबकि पूर्व अपनी धार्मिक व्यवस्थाओं एवं (विशेषतः इस्लाम) अपने इतिहास के साथ संघर्ष कर रहा है।

अर्नेस्ट गैलनर (Ernest Gellner) एवं बर्नाड लेविस (Bernard Lewis) जिन्होंने इस्लाम एवं मुस्लिम समाजों का मुख्य रूप से अध्ययन किया है, अरब समाजों को देशजतावादी दृष्टिकोण से मूल्यांकित करते हैं। इनके मतानुसार इस्लामिक संस्कृति (एवं विचारधारा) एवं इस्लाम का विशिष्ट इतिहास मुस्लिम समाज को समझने के लिए अत्यन्त महत्वपूर्ण है जो कि दोनों पक्षों (संस्कृति एवं इतिहास) को विशिष्टता के साथ व्यक्त करता है। उदाहरण के लिए लेविस अपने निर्णय में स्पष्टता के साथ कहते हैं कि ''अनेक उपचारों/समाधानों का प्रयास किया गया है–हथियार एवं उद्योग, विद्यालय एवं संसद–परन्तु कोई भी वांछनीय परिणाम प्राप्त नहीं कर सका। यहाँ वहाँ उन्होंने कुछ सुधार प्रारम्भ किये एवं कुछ स्तरों पर–जनसंख्या के सीमित भाग–इसके सकारात्मक परिणाम भी दिखें। लेकिन न केवल वे समाधान में असफल रहे अपितु इस्लाम एवं पश्चिमी विश्व के मध्य बढ़ते असन्तुलन को भी नहीं रोक पाये।[1] गैलनर का मत है कि मुस्लिम समाज मजबूत संस्कृति के साथ एक निर्बल राज्य हैं।

अतः मुस्लिम समाजों का प्रत्यक्षीकरण एक विशिष्ट उपागम पर आधारित है। ये वे समाज हैं जो धर्म को केन्द्र बनाकर, जैसे इन संदर्भों में इस्लाम, और उसे आधारभूतीय अवधारणों के रूप में प्रयुक्त कर समाजों का विश्लेषण करते हैं। गैर–मुस्लिम समाजों में यह उपागम प्रयुक्त नहीं होता क्योंकि वे अपनी 'धार्मिक अस्मिता' के

>>

आधार पर परिभाषित नहीं होते। परिणाम स्वरूप वैचारिक–बौद्धिक विमर्श में 'इसाई समाज' अथवा ''बौद्ध समाज'' विश्लेषणात्मक श्रेणी के रूप में उपस्थित नहीं होते, हाँ कुछ नृवंशीय विवेचनों में ऐसे उल्लेख हो जाते हैं। मुस्लिम समाजों के धर्म तक सीमित हो जाने के सच को समझने के लिये तुलनात्मक साक्ष्यों को समझना आवश्यक है। वेबर, जिन्होंने अनेक विचारकों को प्रेरित किया, धर्म एवं समाज से सम्बद्ध उपागम में विशेष रूप से कहते हैं कि धर्म अपने आप में इतना पूर्ण नहीं है कि वह अकेला आर्थिक आचार संहिताओं को निर्धारित करे या निर्णायक रूप दे। फिर क्यों यह स्थापना ''मुस्लिम'' समाजों के अलावा अन्य समाजों पर ही लागू की जाती है?

''आवश्यकतावादी'' अथवा ''देशजतावादी'' दृष्टिकोण की अनुपयुक्तता के अभिव्यक्त होने के बावजूद हमें यह प्रश्न तो उपस्थित करना ही होगा कि ''मुस्लिम'' समाजों को आधुनिकता की तरफ मोड़ने में कौन से कारक अवरोध स्थापित करते हैं? इस स्तर पर हमें उन उपागमों से अलग होना पड़ेगा जो विकास को एक रेखीय दृष्टि से देखते हैं। यदि औद्योगिक पूंजीवाद पश्चिम में (साथ ही अन्य समाजों में भी) सफल होता है तो मुस्लिम–अरब समाजों में यह सफल क्यों नहीं हो सका?

इस प्रश्न का उत्तर देने के लिये कुछ विचारक अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों के मतों की सहायता लेते हैं। अतः हसन के अनुसार ''आर्थिक पिछड़ापन'' एवं ''लोकतान्त्रिक कमी'' अरब समाजों में विशेष रूप से विद्यमान है। आर्थिक पिछड़ेपन का कारण उपनिवेशवाद अथवा भौगोलिक स्थिति अथवा कुसामन्जस्य नहीं है अपितु साझेदारी एवं वंशानुगतता के विषय में विद्यमान ''इस्लामिक कानून'' हैं। पर हमें यह सवाल करना चाहिये कि क्यों समान प्रकृति के/एक से समाजों, जिन्होंने 19वीं शताब्दी से सकारात्मक कानूनों को लागू किया, ऑटोमन साम्राज्य (तुर्की) के संदर्भ में तथा एक सीमा तक ईरान ने तथा 20वीं शताब्दी में अन्य समाजों के लिये इसे लागू किया गया, इस पिछड़ेपन को दूर करने में असफल हुए?

लोकतान्त्रिक कमी की चर्चा करते हुए हसन का तर्क है कि यह घाटा अरब विजयों के उपरान्त नियन्त्रण संरचना के कारण उत्पन्न हुआ। अतः शक्ति का संकेन्द्रण एवं कमजोर नागरिकीय समाजों की उपस्थिति इस ऐतिहासिक संस्थागत स्वरूप की दीर्घकालिक/स्थायी विरासत है (चेनी का मत जिसे हसन ने प्रयुक्त किया है)। इस तर्क की अपनी समस्याएं हैं। प्रथम, हाल का इतिहास इस तर्क की सहायता नहीं करता। मुख्य ऐतिहासिक दृष्टान्तों में विकास लोकतान्त्रिक संरचनाओं एव ''एक प्रभावी नागरिकीय समाज'' का मुख्य उत्पाद नहीं है। इसके विपरीत हम यह चर्चा कर सकते हैं अथवा हमें यह सूचना मिली है कि दक्षिण कोरिया, ब्राजील (एवं एक सीमा तक तुर्की) को बाध्य होकर तानाशाही के दौर में भी औद्योगीकरण की प्रक्रिया को अपनाना पड़ा जिसका खामियाजा श्रमिकों को अपना जीवन एवं अधिकार देकर चुकाना पड़ा। हम चीन के बारे में क्या कह सकते हैं? क्या ये सभी उदाहरण ''पश्चिम'' के उस परिप्रेक्ष्य के अनुरूप हैं जिसमें लोकतन्त्र एवं नागरिकीय समाज को विकास के अनिवार्य कारकों के रूप में स्वीकारा गया है।

दूसरे, कठोरता से लागू रीतियाँ/परिपाटी एवं विश्वास ''विकास अथवा आधुनिकता'' को लागू होने नहीं देता। यह देखना ही काफी है कि ''ज्ञान एवं उच्च शिक्षा'' के क्षेत्र में अरब देशों में क्या हो रहा है। अमेरिकन विश्वविद्यालय या कम से कम अमेरिकन पाठ्यक्रम एवं शिक्षण की विधियाँ अरब क्षेत्रों में सब स्थानों पर फैल रहे हैं। अमेरिकन अंग्रेजी सर्वसत्तात्मक भाषा है और सर्वसत्तात्मक मूल्य व्यवस्था है। यह सब कुछ शक्ति की अलोकतान्त्रिक संरचना एवं धार्मिक विश्वासों की कठोर उपस्थिति के बावजूद हो रहा है। इसके अतिरिक्त इस्लाम एक धर्म एवं विचारधारा के रूप में इन सब स्थितियों के साथ स्थापित है।

यह स्पष्ट है कि इस्लाम ''मुस्लिमों'' के प्रत्यक्षीकरण के केन्द्र में है साथ ही अरब विश्व के भी यह केन्द्र में है। परन्तु दुर्भाग्यवश इस्लाम को मुख्य रूप से विचारधारा के रूप में देखा जाता है अतः एक पूर्वाग्रह–मुक्त उपागम की बजाय समाज के अध्ययन हेतु इसे एक अवरोध के रूप में देखा जाता है। पद्धतिशास्त्रीय दृष्टि से कहें तो अरब विश्व उस वैश्विक व्यवस्था का हिस्सा है जिसके पास विकास के लिए कोई निश्चित राष्ट्रीय आधार नहीं है। इस स्थिति ने निम्न स्तर पर स्थापित लोगों में ''क्रान्तिकारी'' रूझान उत्पन्न किये हैं साथ ही खुला बाजार, कमोवेश विचारों की स्वतन्त्र आवाजाही, संस्थाओं एवं कार्यस्थलों का समरूपीयकरण जैसी स्थितियाँ भी उभरी हैं। इस व्यवस्था के अन्तर्गत विकास की प्रक्रिया सीमित है एवं इस्लाम को राजनीतिक एवं आर्थिक शक्तियों के द्वारा गतिशील किया जा सकता है ताकि इन सीमितताओं की उपस्थिति एवं निरन्तरता को उपयुक्त करार किया जा सके। शक्ति जो कि उस तरीके को स्थापित करती है जिस पर आज इस्लाम केन्द्रित है और बाजार एवं सार्वजनिक क्षेत्र में वर्तमान स्वरूप में विद्यमान है। दूसरी ओर अरब विद्रोह कुछ लोकप्रिय माँगों को व्यक्त करता है जो धामिक प्रकृति की हों आवश्यक नहीं है अर्थात् उनके इस्लामिक अर्थ नहीं हैं। दूसरी ओर इसके विपरीत मुख्य लोकतान्त्रिक, राजनीतिक एवं आर्थिक माँगे स्पष्ट करती हैं कि उस धर्मनिरपेक्ष राज्य को प्राथमिकता दी जा रही है जो सामाजिक न्याय प्रदान करता है। इसके कारण 'इस्लामीकरण' का जो प्रयास विद्रोह/असन्तोष के बाद किया जा रहा है उसके आधार को सामाजिक न्याय एवं आर्थिक सुधार से निर्मित किया जा रहा है न कि इस्लामिक कानून के क्रियान्वयन से। इस असन्तोष ने सामान्य जन की राजनीतिक इच्छाओं को आजादी प्रदान की है जिसने नवीन चुनौतियों के लिए रास्ता साफ किया है। सामाजिक वैज्ञानिकों के रूप में हमें अपने विश्लेषणात्मक उपकरणों को धारदान बनाना होगा क्योंकि वे पुराने उपकरण जो हमें विशेषतः देशजतावाद ने प्रदान किये, अपनी अनुपयुक्तता को प्रस्तुत कर चुके हैं। ■

[1] Lewis, B. (2002) What Went Wrong? New York: Oxford University Press, pp.151-2.

> समकालीन रूस में
लैंगिक प्रश्न

अन्ना टेमकिना, यूरोपीयन विश्वविद्यालय, सेंट पीटर्सबर्ग, रूस

नारीवादी पंक समूह, पूसी रॉयट, मास्को के कैथेड्रल ऑफ क्राइस्ट द सेवायर की वेदी पर क्रेमलिन–विरोधी प्रार्थना करते हुए।

पिछले दो दशकों में शोधकर्त्ताओं और कार्यकर्त्ताओं ने इस बात पर विचार–विमर्श किया कि रूस के सम्बन्ध में क्या 'लिंग' शब्द का उपयोग उपयुक्त है। लिंग (जेण्डर) एजेन्डा क्या हो सकता है, यह समझने के प्रयास में वे अपने आप को बंद गली में पाते हैं क्योंकि आम तौर पर रूसी महिलाओं के खिलाफ भेदभाव नहीं किया जाता है; गर्भपात कानूनी है और महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वतन्त्र और सामाजिक रूप से समर्थित हैं। महिलाओं का कुछ हद तक राजनैतिक प्रतिनिधित्व भी है। बेशक, अभी भी कई तरह की समस्याएँ हैं परन्तु सामान्यतः अधिकांश व्यक्तियों के लिए ये व्यक्तिगत समस्याएँ हैं अर्थात् ये एक ही समय में राजनैतिक मुद्दे नहीं हैं।

हालांकि, गत वर्ष के दौरान, लैंगिक एजेण्डा ने एक नया और मनहूस आकार ले लिया है और हम, अतः यह जानने में रूचि रखते हैं कि इसका क्या अर्थ है और ऐसा क्यों हो रहा है। यहाँ यह उल्लेखित करना चाहिए कि अभी तक यह सार्वजनिक निगाह में नहीं आया है।

> लैंगिक समानता की नैतिक धमकी

सर्वप्रथम 'लिंग' शब्द की बात करें। कई पंडितों के अनभिज्ञ रहते हुए 'लिंग' सहज रूप से चुपचाप राजनीतिक बहस में प्रवेश कर गया है और सिर्फ उन्हीं क्षेत्रों में नहीं जहाँ यह अधिक प्रासांगिक है, उदाहरणार्थ, लैंगिक समानता के इर्द–गिर्द कानून की चर्चा में। अधिक महत्वपूर्ण रूप में, लिंग ने वहाँ भी प्रवेश कर लिया जहाँ अपेक्षित नहीं था और जहाँ इसे व्यापक रूप से देखा नहीं गया जैसे धार्मिक प्रवचनों में। इसके अलावा, इसने विदेशीपन और पश्चिम के प्रतीक के रूप में तीखे नकारात्मक संकेत के साथ प्रवेश किया है। इसे धमकी ओर चुनौती के रूप में देखा गया है।

यह लैंगिक समानता पर कानून पर होने वाली ड्यूमा (Duma) चर्चा के दौरान प्रकट रूप से सामने आया। इस कानून ने, जो शायद आने वाले समय में लागू किया जायेगा, बहुत कम ध्यान आकर्षित किया और इसका बहुत कम प्रभाव था, परन्तु धार्मिक हलकों में इसे धमकी के रूप में देखा गया। धार्मिक अधिकारियों के कथनानुसार समानता को खारिज नहीं किया जा रहा है, परन्तु संवैधानिक सत्ता द्वारा लिंग के प्रश्न पर नियम बनाना उपयुक्त नहीं है। अतः वे 'लिंग' को एक धमकी के रूप में देखते हैं चाहे कानून, यदि पारित होता है, कम प्रभावशाली हो और स्वैच्छिक रूप से ही लगाया जायेगा।

फिर वह क्या धमकी है जो 'लिंग' अवधारणात्मक और व्यावहारिक रूप से प्रस्तुत करता है? इक्कीसवीं सदी के दूसरे दशक में, लैंगिक समानता क्यों और किसके लिए इतनी खतरनाक है जबकि यह लंबे समय से रूस के कई (परन्तु सब नहीं) क्षेत्रों में आदर्श रही है? विडम्बना यह है कि लैंगिक समानता एक राजनैतिक मुददा बन गई है, इसलिए नहीं कि अभी पर्याप्त नहीं है (हालांकि यह भी सही है) और इसके लिए लड़ना पड़ता है परन्तु इसलिए कि उन ताकतों ने, जो इसे नैतिक धमकी के रूप में देखती हैं, इसे एक राजनैतिक मुद्दे में परिवर्तित कर दिया है।

> गर्भपात को प्रतिबंधित करने की प्रतीकात्मक/सांकेतिक राजनीति

दूसरा, सामान्य जनता के ध्यान में आये बिना, 2011 के अंत में, संरक्षण कानून में संशोधनों पर चर्चा हुई जिसका उद्देश्य विशिष्ट रूप से गर्भपात तक पहुँच को सीमित करने का था। इसने कुछ नारीवादी संगठनों को इन्टरनेट पर एक अभियान आयोजित करने और यहाँ तक कि उसे सड़कों पर ले जाने के लिए प्रेरित किया। अंत में अधिकांश संशोधन अस्वीकृत हुए हालांकि उनके अस्वीकृत होने के कारण पूर्ण रूप से स्पष्ट नहीं हैं। निश्चित तौर पर तख्तियाँ उठाये प्रदर्शनकारियों के एक समूह में इतना राजनैतिक प्रभाव नहीं हो सकता था। संशोधनों पर चर्चा कड़ी थी–उसमें काफी अतार्किकता, नैतिक शिक्षा, असंबद्धता और पारिभाषिक अस्पष्टता थी। जनसांख्यिकी विशेषज्ञों, समाजशास्त्रियों एवं चिकित्सकों ने एक बार पुनः समझाया कि गर्भपात की संख्या में कमी निषेध की बजाय आधुनिक गर्भनिरोधों को प्रोत्साहित कर सबसे अच्छी तरह हो सकती है। परन्तु यह कदाचित ही कोई खबर है।

लिंग एजेण्डा और गर्भपात का मुद्दा एजेण्डा के केन्द्र में हैं क्योंकि यह महिलाओं के अधिकार और अजन्में बच्चे के अधिकार के मध्य टकराव के साथ साथ निजी और सार्वजनिक नियन्त्रण एवं उत्तरदायित्व के मध्य टकराव पर केन्द्रित है। यह न केवल अधिक संकेतात्मक शक्ति प्राप्त कर रहा है अपितु इसमें वास्तविक परिणामें के लिए काफी संभावनाएँ हैं। गर्भपात संबंधी ऐसे कानूनों के आर्थिक और सामाजिक पहलू हैं जिनका विभिन्न वर्गों पर भिन्न प्रभाव होता है। ऐसे कानूनों से उच्च वर्ग जो गर्भनिरोधकों का उपयोग लेने का आदी है और यदि आवश्यक हो तो गर्भपात के लिए कीमत चुका सकता है के बजाय समाज का निम्नतम वर्ग अधिक प्रभावित होता है। फिर भी गर्भपात पर विवाद लिंग एजेण्डा पर प्रबल विषय है। अतः सितम्बर, 2012 में सेंट पीटर्सबर्ग के सांसदों ने संविधान में ऐसे संभावित परिवर्तनों पर चर्चा की जो मानवीय भ्रूण को मानवाधिकार प्रदान करेगा।

> समलैंगिकता और पीडोफिलिया (बाल यौन शोषण) को बराबर करना

तीसरा, अभी 18 वर्ष की आयु से कम लोगों के बीच समलैंगिकता और बाल यौन शोषण को बढ़ावा देने वाली प्रचार सामग्री को प्रतिबंधित करने वाला कानून है। इस कानून के अनुसार बाल यौन शोषण का समर्थन देना उसी रूप से देखा जाता है जैसा कि समलैंगिकता को समर्थन देना। समलैंगिकता पर गर्व (Gay Pride) समलैंगिकता को प्रचारित करने का एक उदारहण है, जिसे गैरकानूनी घोषित किया जाना चाहिए। 2012 में कुछ क्षेत्रों, जिसमें सेंट पीटर्सबर्ग भी सम्मिलित है, में पारित यह कानून भी पिछले दो कानूनों की भांति तर्क की कमी और पारिभाषिक अस्पष्टता से ग्रसित है। यह कानूनी रूप से सही प्रतीत नहीं होता है और इसने इन्टरनेट पर विरोध और चर्चाओं को आमन्त्रित किया है।

सबसे महत्वपूर्ण बात यह है कि इसका संकेतात्मक अर्थ है। शायन यह कानून कभी भी लागू नहीं किया जा सकता है परन्तु इसके फिर भी गंभीर परिणाम हो सकते हैं। यह पीडोफाइल्स (बाल यौन शोषण कर्त्ता) और समलैंगिकों को बच्चों को भ्रष्ट करने के लिए बराबर रूप से कलंकित करता है। व्यवहारिक तौर पर, यह राजनैतिक रूप से ''गैर–विश्वसनीय'' समलैंगिकों और LGBT समूहों पर अभियोग चलाने के अवसरों का निर्माण करता है। उसी समय ऐसा कानून बाल यौन शोषण और हिंसा में शामिल वास्तविक और जटिल मुद्दों के विरूद्ध व्यवहारिक संघर्ष को पेचीदा बनाता है। यह इस बात का सुझाव देता है कि इस कानून के समर्थक न तो इस विषय में निपुण हैं और न ही प्रासंगिक वैज्ञानिक अनुसंधान में। ऐसा कोई कारण नहीं है जिसकी वजह से इसे अभी पारित किया जाना चाहिए और क्यों इस संस्करण में जो स्टालिन युग, हालांकि हल्के रूप में, के कानूनों का स्मरण कराने वाला है। यह किसी प्रकार की लामबंदी और व्यापक जन हित का निर्माण नहीं करता है।

> अतार्किक कानून से राज्य नियन्त्रण तक

इन कानूनों के माध्यम से लैंगिक एजेण्डा को प्रोत्साहित करना एक परिचित उदाहरण के रूप में प्रस्तुत होता है। इस प्रकार हम बचपन, मातृत्व और परिवार पर राज्य ड्यूमा आयोग के सिविल विवाह को निंदित करने वाले पूर्व प्रयासों को याद कर सकते हैं। इस तरह से कामुकता, प्रजनन, समानता सभी लैंगिक धमकियाँ बन जाते हैं। परन्तु क्यों? और किसके लिए? यह किस बारे में है? क्या यह गर्भपात की संख्या को कम करने के लिए या उनकी निंदा करने के लिए है। क्या यह परिवार को मजबूत करने के लिए है या इसका उद्देश्य महिला को उसके परिवार को लौटाना है, जिससे उसके अन्य विकल्प सीमित हो जाऐं। क्या यह ऐसी व्यावहारिक सामाजिक नीति विकसित करना चाहता है जिसके द्वारा कई महिलाएँ अधिक बच्चों को जन्म दे सकती हैं? क्या यह बाल यौन शोषण को खत्म करने का विचार है? क्या इसमें

>>

दुनिया की जटिलताओं, सरल समाधानों की असम्भवता और अक्षमता को ध्यान में रखने का विचार है? क्या इसमें विशेषज्ञों को शामिल करने और सार्वजनिक चर्चा आयोजित करने का प्रयास भी सम्मिलित है। या फिर यह संसाधन उपलब्ध कराने या सांसारिक परिणामों की चिंता किये बिना एक असम्बद्ध सांकेतिक हथियार आध्यात्मिकता और रूसी विशिष्टताओं के बारे में सिर्फ नैतिक तर्क चाहता है और विधिक निषेध फिर स्वतः ही अनुसरण करते हैं। एक ठोस तर्क के साथ न्यूनतम वैधानिक तर्क इसमें लापता है।

जहाँ तर्क पर्याप्त नहीं है, बल शून्य को भरता हैं। 'लिंग' को धमकाने वाले 'अन्य' जो कुछ स्याह, अस्पष्ट, अनिश्चित और सीमारहित है, के रूप में निरूपित करना ऐसी प्रतिक्रिया को उचित ठहराना है जो स्वयं भी डरावनी, स्याह और अस्पष्ट है। बल (कानून की भांति ही) को चुनिंदा रूप से लागू किया जा सकता है। हमें इस तरह का अपने इतिहास में काफी अनुभव है।

2012 में पुसी रायट (Pussy Riot), एक नारीवादी पंक–रॉक समूह जो मास्को में राजनैतिक रूप से उत्तेजना पूर्ण तात्कालिक प्रदर्शनों का मंचन करता है, ने राजनैतिक परिदृश्य में प्रवेश किया और विपरितों के एक झुण्ड/पुंज पर प्रकाश डाला–धर्मनिरपेक्षता बनाम् धार्मिकता, परम्परा बनाम् उत्तर आधुनिकता एवं नारीवाद और यहाँ तक कि उन्होंने अपने आप को पुतिन के विपक्ष में प्रस्तुत किया। उन्होंने किसे, क्या और कैसे दण्ड दिया जाना चाहिए और बल प्रयोग की सीमाओं पर सवाल उठाये।

विपरीत राजनैतिक अर्थों के साथ एक सामानांतर विरोधाभासों का एक झुण्ड आध्यात्मिक और धार्मिक प्रवचनों में अभी भी देखा जा सकता है। दरअसल, ये ऊपर उल्लेखित तीनों कानूनों की चर्चाओं में भी विद्यमान थे परन्तु वे जनता के ध्यान में नहीं आये। हालांकि पूसी रायट घटनाक्रम अधिक गोचर/प्रकट था और प्रेस द्वारा चरम प्रतिक्रिया और सार्वजनिक प्रतिशोध के साथ इस पंक–रॉक समूह का स्वागत किया गया। इस समूह के तीन सदस्यों को गुण्डागर्दी के जुर्म में दो साल की कारावास की सजा हुई। जहाँ तर्क अपर्याप्त हो वहाँ बल प्रबल होता है और सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप से उन धर्मनिरपेक्ष राज्यों में जहाँ धार्मिक संस्थाओं के प्रभाव की स्पष्ट सीमा का अभाव है–विशेष तौर पर, सार्वजनिक स्वास्थ्य, प्रजनन, कामुकता और लिंग संदर्भित सामाजिक नीतियों पर उनके प्रभाव की सीमा।

> प्रमाणिक लैंगिक राजनीति के लिए

रूस में कई अध्ययनों (जिसमें जनसंख्या वृद्धि के उद्देश्य से द्वितीय संतान पर आर्थिक प्रोत्साहन देने वाली जनसांख्यिकीय नीतियाँ सम्मिलित हैं) ने दर्शाया है कि माताओं को समर्थन देने वाली वर्तमान सामाजिक नीतियों का प्रभाव अत्यन्त कमजोर है और इसके अलावा ये युवा महिलाओं और उनके परिवारों की वास्तविक आवश्यकताओं को पूरा नहीं करती हैं। महिलाएँ प्रजनन और बाल स्वास्थ्य सेवाओं के अपर्याप्त संघटन के साथ–साथ बच्चों के लिए शिक्षण हेतु सरकार की आलोचना करती हैं। अतः लम्बे समय से रोजगार के दायरे से बाहर होने के कारण या फिर बच्चों को जन्म देने से इंकार (कम से कम एक से अधिक के लिए) करने पर, कई महिलाएँ, अकेली या फिर अपने परिवार के साथ, अपना अधिकांश समय अपने बच्चों के लिए पर्याप्त समर्थन प्राप्त करने के लिए नौकरशाही से लड़ने में बिताती हैं। भविष्य में, वे उन्हें, अपनी माताओं की तरह, अपने वृद्ध और बीमार माता–पिता की देखभाल की समस्या से अकेले ही संघर्ष करना होगा। उन्हें सरकार से पर्याप्त समर्थन नहीं मिलता है और न ही वे इसकी अपेक्षा करती हैं, हालांकि विरोधाभासपूर्ण रूप में वे कुछ प्राप्त करने की उम्मीद नहीं छोड़ती हैं। वे अपने इस संकट के बारे में जागरूक हैं परन्तु प्रश्न यह है कि क्या वे इसे लैंगिक असमानता के रूप में देखती हैं और किन परिस्थितियों में वे अपनी राज्य, पुरूष साथी और नातेदारी जाल पर निरन्तर निर्भरता को समस्या के रूप में देखेगीं।

अब तक, आधुनिक शहरवासियों के सामूहिक असंतोष को सामाजिक नीतियों एवं सामाजिक समस्याओं के लैंगिक चरित्र से जोड़कर नहीं देखा गया है। हालांकि यह स्पष्ट है कि ऐसी जटिल और संसाधन–गहन समस्याओं के संभावित समाधान के लिए सशक्त और ठोस सामाजिक एवं पारिवारिक (अर्थात् लैंगिक) नीति और नागरिकों की निर्णय प्रक्रिया में प्रभावी भागीदारी की आवश्यकता है। परन्तु युवा शहरी महिलाएँ जो राज्य पर विश्वास नहीं करतीं और उस पर भरोसा नहीं करना चाहती हैं, स्वीकार्य मातृत्व–कार्य (mother-work) सन्तुलन को प्राप्त करने के प्रयासों में फिर भी उसकी सामाजिक नीतियों पर निर्भर होती हैं।

जब तक ऐसी नीतियाँ एक नये एजेण्डा का गठन नहीं करतीं और कुछ नये की पूर्वसूचना नहीं देतीं–अर्थात् जब तक राजनीति विभिन्न समूहों के हितों और प्रतिनिधित्व का ध्यान नहीं रखती–कुछ ही चुनिंदा क्षेत्रों (जैसे परिवार जनसांख्यकीय के मामले में विभिन्न समूहों या भिन्न समूहों का समर्थन स्थानांतरित करना), नैतिक शिक्षा देना (समलैंगिकता या गर्भपात के मामले में) या फिर बल का प्रयोग (पूसी रायट के मामले में) में हस्तक्षेप करना संभव है। एक लैंगिक विरोधी राजनीति धीमे धीमे परन्तु निश्चित तौर पर प्रतिपादित हो रही है जिसमें घटती जन्म दर, गर्भपात की, पारिवारिक अस्थिरता, समलैंगिकता और अल्पसंख्यक अधिकारों के उच्च स्तर के लिए पश्चिमी प्रभाव और उनके रूसी समर्थकों द्वारा समर्थित एक घातक अवधारणा 'लिंग' को दोषी ठहराया जाता है। ■

> यूक्रेन में लोक समाजशास्त्र के लिए संभावनाएँ

लिडिया कुजमेस्का, लविव, विश्वविद्यालय, यूक्रेन

वरिष्ठ यूक्रेनी समाजशास्त्री नेशनल कीव–मोहायला एकेडमी में लोक समाजशास्त्र पर कांफ्रेंस में भाग लेते हुए। वे हैं बायें से दायें की तरफ: स्विटलाना ओक्सामाय्टना, वैलैरी खैमैल्को, वोलोडोमिर पैनिओटो (खडे हुए), एन्द्री गोर्बाचिक, एव्जैनी गोलोवाख (बोलते हुए), तथा इरयाना बेकेशकिना।

यूक्रेन में लोक समाजशास्त्र की दुविधाओं पर आयोजित कांफ्रेंस को छोड़ने के पश्चात् मेरे अंदर मिश्रित भावनाएँ थीं। यह कांफ्रेंस कीव–मोहायला एकेडमी और तारस शेवचेन्को के राष्ट्रीय विश्वविद्यालय, जिसमें माइकल बुरावे मुख्य वक्ता थे, संयुक्त रूप से 28 मई, 2012 को आयोजित की गई थी। बुराने वे समाजशास्त्र के चार प्रकारों वाला प्रसिद्ध प्रारूप प्रस्तुत किया, जिसमें उन्होंने समाजशास्त्र के अस्तित्व में बने रहने के माध्यम के रूप में लोकसमाजशास्त्र के महत्व को उजागर किया। प्रोफेसर बुराने ने स्पष्ट किया कि लोक समाजशास्त्र समाजशास्त्री और समाजशास्त्र को समाज के प्रति उत्तरदायी बनाता है। फलस्वरूप यह महत्वपूर्ण मुद्दों को सार्वजनिक चर्चा में ला कर समाजशास्त्र को वैधता भी प्रदान करता है। संक्षिप्त रूप में, लोक समाजशास्त्र एक तरफ तो यह मानता है कि ऐसे समाजशास्त्री हैं जो अपने ज्ञान को बाँटना चाहते हैं और दूसरी तरफ ऐसी जनता है जो समाजशास्त्र को सुनना (और काम में लेना भी) चाहती है।

इसके बाद वाली पेनल चर्चा ने प्रमुख यूक्रेनी समाजशास्त्रीयों व एक रूसी सहकर्मी, ऐलेना ट्रूबिना को एक साथ एकत्रित किया। उन्होंने ''यूक्रेन में लोक समाजशास्त्र को निर्वाह करने का अर्थ क्या है?'' प्रश्न पर बहस की। बहस के दौरान वे मौजूदा बाधाओं की आम समझ पर एकमत थे तब भी जब वे लोक समाजशास्त्र के भविष्य के भावी फल पर भिन्न मत थे। मुश्किलों के संदर्भ में, सभी वक्ताओं ने उल्लेख किया कि यूक्रेनी समाजशास्त्र में जवाबदेही और वैधता दोनों का अभाव है। लोक समाजशास्त्र का स्पष्ट प्राधान्य, जिसे आर्थिक लाभ के स्त्रोत के रूप में देखा गया, व्यापक सार्वजनिकता में इसकी जवाबदेही को सीमित करती है, जबकि लोक समाजशास्त्र को अधिकतर उदासीन जनता के लिए विज्ञान के सरलीकरण के रूप में देखा जाता है; इसके साथ ही, कमजोर सी सार्वजनिक भाषाई योग्यता और जटिल भाषा, समाजशास्त्रियों और जनता के मध्य संपर्क बनाने को दोनों के लिए मुश्किल पैदा करती है – उदाहरण के लिए पत्रकारों के साथ संपर्क जो लघु और शीघ्र उत्तर चाहते हैं। इसके परिणामस्वरूप, आम जनता यूक्रेनियन समाजशास्त्र की उपलब्धियों के बारे में न तो अवगत है और न ही इच्छुक है, जो इसे वित्तीय या नैतिक समर्थन को प्राप्त करने के लिए भरोसा या वैधता प्रदान नहीं करता।

ऐसी निराशावादिता से असहमति जताना, चुनौतीपूर्ण था परन्तु मुझे यूक्रेन में वास्तव में लोक समाजशास्त्र को निर्वाह करने वालों ने आश्वस्त किया। उन लोगों में हमें इवगेनी गोलोवाखा और इरयाना बेकेशकिना जैसे सम्मानीय और अनुभवी समाजशास्त्री हैं जो टेलीविजन और पत्रिकाओं में अक्सर योगदान देते हैं और साथ ही युवा शोधार्थी जैसे किव–मोह्यला अकादमी से Spil'ne (''द कामन्स'') नामक पत्रिका प्रकाशित करने वाले और देश भर में भ्रमण कर उस में छपे लेखों को विभिन्न लोगों के साथ चर्चा करते हैं। इनकी गतिविधियाँ साबित करती हैं कि यूक्रेन में लोक समाजशास्त्र अस्तित्व में है। हालांकि, अभी इस क्षण के लिए, यह मुख्यतः व्यक्तिगत या छोटे समूहों की पहल है और यह अधिक दृश्यता और विशेष रूप से युवा पीढ़ी के समाजशास्त्रियों के वृहद जुड़ाव से लाभान्वित हो सकता है। यूक्रेन में समाजशास्त्र के विकास के लिए समाजशास्त्र में खुलापन और दृश्यता के साथ–साथ भिन्न लोगों/जनता पर इसके प्रभावों की उपादेयता भी आवश्यक है। अन्यथा, यह सीमित वित्तीय एवं मानव संसाधनों के साथ फंसा रहेगा।

इसके अतिरिक्त, लोक समाजशास्त्र स्वायत्त नागरिक समाज का प्रभावी समर्थक हो सकता है। हम अपने देश की छवि को आम जनता के साथ उनकी समस्याओं पर चर्चा कर व उन पर कार्य कर के बदल सकते हैं (अतः हमें करना चाहिए), उसी प्रकार जैसे हर रोज के प्रकटनों के पीछे छिपे प्रच्छन्न प्रक्रियाओं को चिकित्सक अनावरण करने की कोशिश करते हैं–प्रोफेसर यूरी यकोवेन्को के रूपक काम में लेते हुए। नई प्रौद्योगिकी, रचनात्मक विचारों और युवा पहलों को काम में लेने से यूक्रेन में लोक समाजशास्त्र को बढ़ावा मिल सकता है। हम आशा करते हैं कि कांफ्रेंस हमें उसी दिशा में ले जायेगी। ■

> रोमानिया की असंतोष की ठंड

केटेलिन अगस्तीन स्टोइका और विन्तिला मिहाइलेसक्यू, नेशनल स्कूल फॉर पोलिटिकल एण्ड एडमिनिस्ट्रेटिव सर्विसेज (SNSPA), बुखारेस्ट, रोमानिया

जनवरी 2012 में बुखारेस्ट शहर के व्यापारिक कस्बे के विश्वविद्यालय के चौक में प्रदर्शनकारी। चित्र व्लाद पेट्री द्वारा।

वैश्विक वित्तीय संकट की काली छाया को रोमानियाई राजनीतिज्ञों ने जो 2008 और 2009 के साधारण और राष्ट्रपति चुनावों के प्रचार में व्यस्त थे, व्यापक रूप से नजरअंदाज किया। फिर भी, 2010 के शुरूआत में रोमानिया आर्थिक पतन का सामना कर रहा था। इससे बचने के लिए सरकार और राष्ट्रपति बसेसक्यु (Basescu) ने IMF और यूरोपीय संघ से अपील की, जिन्होंने फिर कड़ी शर्तों पर रोमानिया को पैसा उधार दिया। इस पृष्ठभूमि के साथ, मई 2010 में रोमानिया की मध्य–दक्षिण पंथी सरकार ने मितव्यत्तता के अप्रिय उपायों की एक श्रृंखला को अपनाया : सार्वजनिक क्षेत्र के कर्मचारियों के वेतन में 25% की कटौती की गई, कुछ पेन्शनों पर कर लगाया गया, सामाजिक लाभों में कमी की गई, मूल्य योजित कर (value added tax) को 19% से 24% तक बढ़ाया गया और हजारों सरकारी क्षेत्र में कर्मचारियों को नौकरी से हटाया गया। आर्थिक संकट के साथ मित्तव्यत्तता के उपायों ने रोमानिया के निजी क्षेत्र को तबाह कर दिया और सम्भावित विदेशी निवेशकों को डरा कर भगा दिया।

इस आर्थिक कठिनाई के समय के दौरान, पुराने और संभवतः भूली हुई समस्याएँ पुनः उभर आईं। भ्रष्टाचार से लड़ने के लिए विधिक ढाँचे में महत्वपूर्ण परिवर्तनों के बावजूद अधिकांश रोमानियाई राजनीतिज्ञों और सरकारी संस्थाओं में व्यापक भ्रष्टाचार से (पुनः) असंतुष्ट हो गये। मीडिया की खबरें और गैर सरकारी संगठनों की रिपोर्टों ने राष्ट्रीय या स्थानीय (निर्वाचित) अधिकारियों और राजनीतिक रूप से जुड़े बड़े उद्यमी (तथाकथित ''स्मार्ट लोग'') के मध्य कई संश्यी (और कई बार चौका देने वाले) सौदों को उजागर किया है। इसके अतिरिक्त, निजी व्यवसायियों ने सार्वजनिक अधिकारीयों और अन्य नेताओं के परभक्षी, तथा धूसखोरी व्यवहार की सार्वजनिक भर्त्सना नये सिरे से की।

2010 और 2011 में ट्रेड यूनियनों और नागरिक समाज संगठनों ने मध्य–दक्षिण पंथी सरकार की नीतियों का विरोध किया परन्तु वे 2012 के शुरूआत तक रोमानियाई आबादी की सार्थक लामबंदी के निर्माण में असफल रहे। जनवरी 2012 में, तीन सप्ताह से भी अधिक के लिए, बुखारेस्ट और 50 अन्य नगरों में हजारों रोमानियाई रईद अराफात (Raed Arafat), फिलस्तीन में जन्में रोमानियाई चिकित्सक, जिसने पुनरुज्जीवन एवं मुक्तिकरण (Resucitation and Extrication) नामक एक राष्ट्रीय गतिशील आपातकालीन सेवा को बनाने में मदद की, जो यूरोपीय स्तर पर उत्कृष्ट कार्यप्रणाली का उदाहरण थी, के इस्तीफे का विरोध करने के लिए सड़कों पर उतर गये। डॉ. अराफात ने रोमानिया के राष्ट्रपति, ट्रायन बसेसक्यू के साथ टेलिविजन पर प्रसारित विवाद के पश्चात इस्तीफा दिया था। राष्ट्रपति ने एक नये स्वास्थ्य कानून जो राष्ट्रीय आपातकालीन चिकित्सा व्यवस्था के निजीकरण को बढ़ावा देता है, के मसौदे को अपनाने का समर्थन किया। विरोधों ने पूर्व गठबंधन सरकार, राजनैतिक विपक्ष और पंडितों को समान रूप से आश्चर्यचकित कर दिया क्योंकि उनमें से अधिकांश लोगों का मानना था कि ''polenta कभी विस्फोट नहीं करता।'' द इकोनोमिस्ट के अनुसार, (रोमानिया में दंगे : बुखारेस्ट का युद्ध, जनवरी 16, 2012) ''यह रोमानियाइयों द्वारा अपने देश के लाक्षणिक सब्रपूर्ण स्वीकृति के नजरिये को वर्णित करने वाला दुरूह मुहावरा है।''

रईद अराफात का इस्तीफा प्रेरणादायी प्रारम्भिक घटना थी परन्तु प्रदर्शनकारियों की माँगे व्यापक मुद्दों पर केन्द्रित थीं: पूर्व की मध्य–दक्षिण पंथी सरकार द्वारा अपनाये गये मितव्यत्तता के उपाय, चालू आर्थिक संकट, राजनीतिज्ञों में गोचर विस्तृत भ्रष्टाचार, लोगों की जरूरतों और तकलीफों के प्रति पूर्व गठबंधन सरकार की कथित उदासीनता। कुछ स्थानीय और विदेशी विश्लेषकों ने कई कारणों से इन विरोधों को Indigndos आंदोलन का रोमानियाई संस्करण बताया : पहला, असंतुष्टि की रोमानियाई थीम पेन्शन

प्रदर्शनकारियों को नियंत्रित करने के लिए भेजा गया भारी पुलिस दल।
चित्र व्लाद पेट्री द्वारा।

से स्वास्थ्य सेवा, महिला अधिकारों से बाल सहायता लाभ, वेतन, और पर्यावरण के मुद्दों के साथ बहुत अधिक विविध थी। दूसरा, रोमानियाई प्रदर्शन विविध सामाजिक पृष्ठभूमि वाले विरोधियों द्वारा समर्थित थे। बुखारेस्ट के विश्वविद्यालय चौक और अन्य नगरों में प्रदर्शनकारियों के समूहों में सेवानिवृत्त, कॉलेज विद्यार्थी, बेरोजगार, बहुराष्ट्रीय कम्पनीयों के कर्मचारी, फुटबाल बदमाश (या तथाकथित ''अल्ट्रास''), प्रतिष्ठित विश्वविद्यालय प्रोफेसर, नारीवादी, चरम दक्षिण पंथी और लोकवादी पार्टियों के समर्थक, वामपंथी अतिवादी, हिपस्ट्र्स और बेघर लोग शामिल थे। तीसरा, लामबंदी के मुख्य साधन इन्टरनेट, मोबाइल फोन नेटवर्क और टेलिविजन थे। चौथा, असंतुष्टि की कुछ थीम अपने चरित्र में वैश्विक या पारदेशीय थी। उदाहरण के लिए पर्यावरण के मुद्दे, महिला अधिकार, IMF की नीतियाँ और वित्तीय संस्थाओं का गैर–जिम्मेदाराना व्यवहार। पाँचवा, असंतुष्टि की कुछ थीम प्रत्यक्ष रूप से (अंग्रेजी में) Indignados और वाल स्ट्रीट पर कब्जा करो आंदोलनों के संकेतात्मक शस्त्रागार में से उधार ली गई थीं। सर्वोपरि रूप में, विश्व के अन्य भागों की तरह, रोमानिया में भी, प्रदर्शनकारी सभी वर्तमान नेताओं की मुखर आलोचना और अस्वीकृति के द्वारा एकजुट थे।

पूर्व की मध्य–दक्षिण पंथी सरकार के उच्चाधिकारियों ने इन घटनाओं की महत्तता को कमतर करने का प्रयास किया और प्रदर्शनकारियों को ''अकुशल और हिंसात्मक कच्ची बस्ती के निवासी'', ''कीडे'' या ''विक्षिप्त व्यक्ति'' कह कर बेइज्जती की। हालांकि जनवरी के अंत तक राष्ट्रपति एमिल बॉक ने इस्तीफा दे दिया, नये स्वास्थ्य कानून का मसौदा वापिस ले लिया गया, डॉ. अराफात को स्वास्थ्य मंत्रालय में राज्य उप–सचिव के पद पर बहाल कर दिया गया, और नई सरकार ने घोषणा की कि वह सरकारी क्षेत्र में कार्यरत अपने कर्मचारियों के वेतन को बढ़ाने की कोशिश करेगी। नई मध्य–दक्षिण पंथी सरकार कुछ ही महीने चली और अंततः विपक्ष द्वारा निंदा प्रस्ताव लाने के कारण गिर गई। यद्यपि परिमाणात्मक दृष्टिकोण से रोमानियाई विरोध स्पेन की तुलना में बहुत कम संख्या में लोगों पर निर्भर था, फिर भी इन विरोधों का प्रभाव अत्यन्त शक्तिशाली रहा। कुछ विश्लेषकों के अनुसार जनवरी, 2012 के घटनाक्रम ने रोमानिया में नागरिक भागीदारी के नये युग का सूत्रपात किया।

अन्य रोमानियाई सहकर्मियों (समाजशास्त्री, मानवशास्त्री और मीडिया विश्लेषकों) के साथ हमने जनवरी, 2012 के विरोधों पर एक पुस्तक–द विन्टर ऑफ अवर डिसकन्टेंट : द रोमानियन प्रोटेस्टस ऑफ जनवरी–फरवरी 2012–का संपादन किया है। कुछ लोग यह दावा कर सकते हैं कि जनवरी 2012 की घटनाओं का गहन विश्लेषण करने के लिए अभी बहुत जल्दी है। हालांकि हम दावा करते हैं कि हाल ही हुए रोमानियाई विरोधों का अध्ययन करने के लिए लोक समाजशास्त्र उपागम को लगाना अभी जल्दी नहीं है। इस पृष्ठभूमि के साथ हमारी किताब सार्वजनिक मुद्दों का समाजशास्त्रीय विश्लेषण प्रस्तुत कर विस्तृत श्रोतासमूह तक पहुँचने का उद्देश्य रखती है। यह जिन लोगों ने हाल ही के घटनाक्रम को देखा और वे जो इनमें शामिल थे, के मध्य संवाद स्थापित करने के लिए मंच प्रदान करती है। हमने इन घटनाओं से कोई ''सामान्य निष्कर्ष'' निकालने का प्रयास नहीं किया है परन्तु माइकल बुरावे की लोक समाजशास्त्र की राह पर चल कर, हमारा उद्देश्य सिर्फ विरोधों पर भिन्न दृष्टिकोण और मत प्रस्तुत करना रहा है। इस किताब में इच्छुक पाठक अंग्रेजी के लिए यह वेबसाईट http://www.proteste2012.ro/en.html देख सकते हैं। ■

> वैश्वीकरण से परे रोमानियन समाजशास्त्र

आयोना फ्लोरिया, बुखारेस्ट विश्वविद्यालय, रोमानिया और डेलिया बदोई, बुखारेस्ट विश्वविद्यालय और EHESS पेरिस, फ्रांस

माइकल सेर्निया, जॉर्ज वाशिगंटन विश्वविद्यालय (यूएसए), समाजशास्त्र को अपने जीवन–पर्यन्त योगदान के लिए विशिष्ठ पुरस्कार प्राप्त करने के लिए रोमानियां लौट कर आये।

अकादमिक जगत में जून को महत्व पूर्ण घटनाओं वाला महीना मानते हैं जिसमें परीक्षा और मूल्यांकन शोध परियोजनाओं के लिए आवेदन की अंतिम तिथियाँ, समर स्कूल के लिए आवेदन, सेमेस्टर–अंत की कांफ्रेस होती हैं। इसी परम्परा के अनुसार, बुखारेस्ट में रोमानियन समाजशास्त्रीय परिषद (RSS) की अंतर्राष्ट्रीय कांफ्रेस जो समाजशास्त्र एवं समाज कार्य संकाय, बुखारेस्ट विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित की गई थी, के साथ जून, 2012 की अच्छी शुरूआत हुई। 2008 में स्थापित RSS एक बढ़ता हुआ पेशेवर समूह है जिसने देश के चारों तरफ के सभी समाजशास्त्र विभागों से दोनों युवा और स्थापित शोधार्थियों को तीस से भी अधिक वर्किंग ग्रूप और खण्डों में इकट्ठा किया है। 2008 से रोमानियन समाजशास्त्र की सार्वजनिक दशा पर काफी अधिक बहस होने लगी है, विशेष रूप से क्लुज नपोका (Cluj-Napoca) और हाल ही में बुखारेस्ट में हुई RSS की वार्षिक बैठक में। इस वर्ष की कांफ्रेस का मुख्य फोकस सामाजिक जीवन के लिए समाजशास्त्र की भूमिका और उपयोगिता की रूपरेखा प्रस्तुत करना था। कांफ्रेस के अन्य केन्द्र बिंदु निम्न से सम्बन्धित थे: समाजशास्त्रीय ज्ञान से शोधार्थी वास्तव में क्या कर सकते हैं और हम समाजशास्त्रीय ज्ञान पर आधारित बेहतर नीतियों का निर्माण कैसे कर सकते हैं?

''वैश्वीकरण से परे?'' शीर्षक की यह कांफ्रेस तीन दिवसीय बहस का मंच बनी–ठीक वैसे ही जैसा नियोजित था और जैसे कोई भी वैज्ञानिक कार्यक्रम होना चाहिए। इन में से पहली बहस शीर्षक में लगे प्रश्न चिन्ह से सम्बन्धित थी–यह यहाँ क्यों है, इसका क्या अर्थ है, क्या ''वैश्वीकरण से परे'' हमारा सामाजिक जीवन बदल गया है, वैश्वीकरण से परे वास्तव में क्या स्थित है? जैसा कि अच्छी बहस में होता है, यह खुली रही।

कांफ्रेस के प्रारंभ के प्लेनरी सत्रों ने बहस के एक नये चक्र को शुरू किया। प्रोफेसर माइकल बुरावे (केलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले), लजॉर व्लासकेनू (Lazar Vlasceanu), और मरीयन प्रेदा (Marian Preda) (बुखारेस्ट विश्वविद्यालय) ने लोक समाजशास्त्र पर बहस की शुरूआत की–इसकी क्यों और किसे आवश्यकता है, अन्य ''समाजशास्त्रों'' ("Sociologies") से इसका क्या सम्बन्ध है, यह क्या कर सकता है और कैसे? और माइकल बुरावे द्वारा छेडी गई बहस और रोमानियन समाजशास्त्र के लिए चुनौती, पर क्या समाजशास्त्री आम जनता से बात करने के लिए सक्षम हैं और यदि ऐसा होता है तो यह कैसे समाजशास्त्र को प्रभावित करेगा? रोमानियन लोक समाजशास्त्र के बारे में विवादास्पद चर्चा प्रोफेसर लजॉर व्लासकेनू अध्यक्ष, RSS वैज्ञानिक समिति द्वारा छेड़ी गई थी और उन्होंने तर्क दिया कि रोमानिया में समाजशास्त्र आम जनता को आकर्षित करने और अपने ज्ञान को लोगों के जीवन से जोड़ने में असफल रहा है।

रोमानियन सामाजिक जरूरतों का उत्तर देने के लिए आज समाजशास्त्र के वैज्ञानिक प्रभावक्षेत्र में समीक्षात्मक एवं अभिव्यक्तिपरक दृष्टिकोण विकसित हो रहा है। इस संदर्भ में माइकल बुरावे की लोक समाजशास्त्र के बारे में गोल मेज चर्चा ने रोमानिया में पेशेवर समाजशास्त्र के वास्तविक संदर्भ के बारे में कई रोचक बहस और रोमानियन समाजशास्त्र की सार्वजनिक प्रस्थिति की बहुत सी आलोचनाओं को जन्म दिया। रोमानिया में लोक समाजशास्त्र एक तरफ तो हाशिये पर दिखाई देता है और वहीं दूसरी तरफ वांछनीय, क्योंकि समाजशास्त्रियों को जनता से संवाद करना चाहिए। जब हम एक अच्छे लोक समाजशास्त्र के अर्थ और अस्तित्व के बारे में चर्चा करने लग जाते हैं तब राष्ट्रीय समाजशास्त्र की विरासत महत्वपूर्ण है। अतः समाजशास्त्री माइकल कर्निया (Michael Cernea) अपनी गोल मेज के दौरान हमें स्मरण कराते हैं कि रोमानिया में लोक समाजशास्त्र की परम्परा है–1921 में डिमित्री गुस्ती (Dimitrie Gusti) द्वारा ''रोमानियन समाजशास्त्रीय मत'' में विकसित "Sociologia militans"। कुछ रोमानियाई समाजशास्त्रियों ने समाजशास्त्रीय इतिहास में लोक समाजशास्त्र को ढूँढा। कुछ हद तक, रोमानियाई समाजशास्त्र ने सामाजिक सिद्धान्त से सामाजिक व्यवहार को जोड़ने (राइट मिल्स की शब्दावली में) के मुद्दे का सामना किया है। हमें शायद पहले आनुभाविक अनुसंधान और सामाजिक सिद्धान्त के मध्य घनिष्ठ सम्बन्ध विकसित करने की जरूरत है और इस तरह रोमानिया में प्रभावी सार्वजनिक उपस्थिति के आधार हेतु सशक्त पेशेवर समाजशास्त्र का विकास करना होगा। यदि रोमानिया में यह समस्या है कि समाजशास्त्रियों ने लोक समाजशास्त्र का सृजन नहीं किया, यह इसलिए है क्योंकि रोमानिया में ऐसे समाजशास्त्री नहीं हैं जो सार्वजनिक क्षेत्र में व्यस्त हों, ऐसी वचन–बद्धता जो वैज्ञानिक स्तर पर समरूपी बहस को उत्पन्न या गहरा कर सके। जैसा माइकल बुरावे ने कहा था, ''समाजशास्त्री सिर्फ चुनाव के समय उपस्थित रहते हैं और उसके पश्चात गायब हो जाते हैं।'' यह निश्चित रूप से जीवन्त रोमानियाई लोक समाजशास्त्र के लिए सही रास्ता नहीं है।

लोक समाजशास्त्र की चुनौतिया न सिर्फ रोमानिया में बल्कि सभी देशों में मुद्दा है। दूसरी जगहों की भांति, सार्वजनिक वैज्ञानिक बहस से डरने वाली पेशेवर समाजशास्त्र के सम्मुख खुले में आना भी काफी जोखिम भरा है। यह तथ्य कि पेशेवर समाजशास्त्र और लोक समाजशास्त्र के मध्य स्थाई तनाव है, समाजशास्त्रियों के लिए सार्वजनिक क्षेत्र के साथ वचनबद्ध रहना और भी कठिन कर देता है। निश्चित रूप से हम सिर्फ वचनबद्धता की बात नहीं कर रहे हैं बल्कि सामाजिक परिवर्तन लाने के लिए हस्तक्षेप की बात भी कर रहे हैं। रोमानियाई समाजशास्त्री भी ''क्या समाजशास्त्र सामाजिक आंदोलनों को पैदा कर सकता है?'' के प्रश्न में पूर्ण रूप से डूबे हुए थे। एलेन तोरेन (Alain Touraine) की ''समाजशास्त्रीय हस्तक्षेप'' की अवधारणा का अनुसरण करते हुए लोक समाजशास्त्रियों को यह भी समझना चाहिए कि समाजशास्त्र दुनिया को बदल नहीं सकता परन्तु वह कैसे कार्य करती है इसको समझने में मदद करता है। एक अच्छा लोक समाजशास्त्र पेशेवर समाजशास्त्र के साथ गहरे ढंग से जुड़ा होता है और समाजशास्त्रीय मुद्दों को भिन्न जनता के समझ आने वाली भाषा में अनुवाद करने के लिए समर्पित रहता है।

रेने डेस्कारटेस विश्वविद्यालय, पेरिस V (René Descartes University, Paris V) के प्रोफेसर जीन–क्लाड कॉफमेन (Jean-Claude Kaufmann) ने सहजता और प्रतिमानों के निर्माण के प्रश्न पर हमारी चर्चाओं को प्रोत्साहित किया जिससे वैश्वीकरण पर वृहद दृष्टिकोण रोजमर्रा की जिंदगी के सूक्ष्म अवलोकन के साथ जुड़ गये। प्रोफेसर माइकल कर्निया ने विश्व बैंक के प्रोजेक्टों में अपनी भागीदारी के किस्सों के साथ रोमानियाई समाजशास्त्र का निजी इतिहास प्रस्तुत किया। इसके द्वारा उन्होंने समाजशास्त्र और सामाजिक नीति में पुराना बनाम् नया, स्थानीय बनाम् वैश्विक चुनौतियों पर बहस के लिए रास्ता खोल दिया। प्रोफेसर मरियन प्रेदा ने वैश्वीकरण के परे छिपी सामाजिक जोखिमों और असमानताओं–भावी पीढ़ी द्वारा चुकाये जाने वाले पिछले एवं वर्तमान ऋण, जनसांख्यिकीय परिवर्तन और उपभोक्ता समाज के खतरें–पर बहस को प्रोत्साहित किया।

शुरूआती भाषणों में ऐसी थीम और ऐसे प्रतिभागी जो भयभीत करने वाले बड़े हाल में जहाँ प्लेनरी सत्रों का आयोजन किया गया था, में भी विख्यात प्रोफेसरों से प्रश्न पूछने में संकोच नहीं करते थे, के साथ आप कांफ्रेस के दौरान फैली बहस की लहरों की कल्पना कर सकते हैं। इसके साथ, प्रत्येक पेनल (और वे करीबन 40 थे) का अपना प्रश्न–उत्तर सत्र था जिसमें बहस की एक और लहर उठी।

अंतिम, परन्तु सबसे कम नहीं, कांफ्रेस में भाग लेने वाले युवा सामाजिक शोधार्थियों ने इस वैश्विक क्षण जिसमें सिर्फ देश भर के ही नहीं बल्कि दुनिया भर के सहकर्मियों के साथ बैठक का लाभ उठाया। शैक्षणिक कोष से सीमित पहुँच वाले रोमानियाई विद्यार्थियों के लिए यह एक अदभुत और विशिष्ट अवसर था। रोमानियाई समाजशास्त्रीय समाज के ढाँचे के अन्तर्गत नये वर्किंग ग्रुप स्थापित किये गये। नई सहयोगी शोध परियोजनाएँ, किताबें व लेखों की योजना बनाई गई। यह विद्वतापूर्ण लेखों के मूल्यांकन पर ISI Web of Knowledge के एकाधिकार की कठोर आलोचना करने का एक अवसर भी था। युवा शोधार्थी के रूप में, हमने बढ़िया आलोचनात्मक बहस का आनंद उठाया। ■

> क्रिटिकअटैक (CriticAtac): रोमानिया से एक पूंजीवाद विरोधी घोषणा पत्र

विक्टोरिया इस्टोइक्यू, सिप्रियन स्युलिया, मिहाई आयोवानेल, ओविडयू टिचिनडेल्यानू, कोस्ती रोगोजानू, फ्लोरिन पोयनारू एवं वसीली एरन्यू, ये सभी CriticAtac के प्रतिनिधि हैं

क्रिटिकअटैक के सदस्य: विक्टोरिया इस्टोइक्यू, वसीली एरन्यू, तथा सिप्रियन स्युलिया, माइकल बुरावे को अपना परिचय कराते हुए।

रोमानिया का दौरा करते समय ग्लोबल डायलाग के संपादक इस उत्साही, कार्यशील एवं उदारवादी चेतना से जुड़े समूह के संपर्क में आये। बुखारेस्ट विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग एवं CriticAtac ने मिलकर "साम्यवाद के बाद मार्क्सवाद" विषय पर एक गोष्ठी का आयोजन किया, जिसमें भारी संख्या में लोगों ने सहभागिता की। इस गोष्ठी से ऐसा महसूस हुआ कि अतीत के सोवियत में जहां मार्क्सवाद को अस्वीकृत किया गया था के सामाजिक परिवेश में अत्यन्त महत्वपूर्ण बदलाव उभर कर आ रहा था।

क्रिटिकअटैक (CriticAtac) एक सामाजिक, बौद्धिक एवं राजनैतिक समूह है जिसकी स्थापना बुखारेस्ट में सितम्बर 2010 में हुई थी। हमारे समूह की विचारधारा वामपंथी है परन्तु हम कोई विचारधारा गुट नहीं हैं और न ही हम अपनी प्रतिभाशाली एवं संगठित विचरधारा के लिए एक दूसरे की पीठ थपथपाते रहते हैं। हमारे मुख्य उद्देश्यों में से एक ऐसा कुछ नवीन पैदा करना था जो कि घिसा–पिटा, व्यक्त करने में असमर्थ, नित्यकर्म, तथा

>>

आधिकारिक सार्वजनिक क्षेत्र से अलग हो, और यही हमारी विविधता का एक कारण है।

CriticAtac शिक्षाविदों का समूह नहीं है। हालांकि हमारे अनेक लोगों से शैक्षणिक संपर्क हैं। www.Criticatac.ro के रूप में हमारा एक इलेक्ट्रॉनिक प्लेटफार्म है। लेकिन हम इस आनलाईन स्पेस के बाहर भी जाते हैं और विश्वविद्यालयों में सभा, सेमीनार एवं वाद–विवाद का आयोजन करते हैं। नवम्बर, 2011 में हमने रोमानियन सामाजिक फोरम का आयोजन किया और उसमें रोमानिया के सभी महत्वपूर्ण समूहों एवं सामाजिक आंदोलनों से जुड़े कार्यकर्त्ताओं को आमन्त्रित किया ताकि हमारे समाज के महत्वपूर्ण मुद्दों जैसे सार्वजनिक वस्तुओं, प्रतिरोध के स्वरूप, लोकतान्त्रीकरण इत्यादि पक्षों पर विस्तृत चर्चा की जा सके। हमारा यह प्रयास होता है कि सामाजिक एवं राजनैतिक मुद्दों पर उन्हीं लोगों से विमर्श किया जाये जो इन मुद्दों में सक्रिय हैं अथवा सहभागिता करते हैं। इसके परिणामस्वरूप उस सार्वजनिक क्षेत्र की ओर नये लोग हमारी ओर आकर्षित होते हैं। हालांकि आज की स्थिति में यह सार्वजनिक क्षेत्र विखण्डन के कगार पर है। बहुत सारे लोगों का न तो आज कोई प्रतिनिधित्व है और न ही उनकी कोई आवाज है। जबकि कुछ सम्भावित लोगों पर 'एजेण्डा लेखन' का दायित्व है या उन पर यह दायित्व छोड़ दिया गया है।

आज के रोमानिया की मुख्य धारा का बुद्धिजीवी बाजार का उत्साही समर्थक है उसने यह सीख लिया है कि जनता को किस प्रकार की वैचारिक क्रियाओं से जोड़ा जाए एवं एक नियन्त्रित सांस्कृतिक बाजार की तरफ उसे आकृष्ट किया जाय जिसकी कोई दिशा नहीं है। हमारे यहाँ एक बौद्धिक 'स्वतन्त्र बाजार' है जहाँ सफलता का मापदण्ड विद्यमान विरासत प्रणालियाँ एवं अल्पतान्त्रिक प्रभुत्व प्रणालियाँ हैं। हम लोगों के सम्मुख एक गम्भीर वैचारिक रूकावट है जो कि साम्यवाद विरोध एवं पश्चिमीकरण के प्रति अत्यधिक रूझान, पूंजीवादी समर्थन की अनिवार्यता, आक्रामक प्रकृति के अभिजनवाद इत्यादि जैसे विषयों से उत्पन्न होती है।

ये ऐसे विषय हैं जो साम्यवाद के पतन के बाद से बीस सालों में मुख्य रूप से पनपे हैं और दिशाहीनता के सूचक हैं। एक सीमा तक इन विषयों का सम्बन्ध उन पक्षों से है जो हमें कहीं भी नहीं ले जाते और कुछ भी प्रदान नहीं करते।

हम जनता के पक्षों से जुड़े मुख्य पक्षों पर टिप्पणी करते हैं साथ ही हमारे समाज के आधारभूतीय पक्षों, जिन्हें हम आधारभूत मानते हैं, जैसे समानता, निजी एवं सामाजिक अधिकार जिनसे सम्बद्ध इकाई अपना रास्ता बनाये, भेदभाव एवं विशेषाधिकार, असमानता एवं समान अवसर, नियोक्ता एवं कर्मचारियों के मध्य सम्बन्ध, राज्य एवं समाज के मध्य सम्बन्ध, राजनीतिक व्यवस्था के भविष्य इत्यादि पर गहन विमर्श करते हैं। हमारा यह गहन विमर्श तर्कयुक्त अर्थपूर्ण होता है और इसे सहजता से सम्प्रेषित किया जाता है। हमारी रूचि इन क्षेत्रों में नहीं है जहाँ बिना प्रभावी तर्कों के निगम विरोधी सक्रियता, आक्रामक प्रकृति के पर्यावरणवाद अथवा फैशनेबिल रूप में उपभोक्तावाद विरोध के पक्षों को प्रस्तुत किया जाता है।

हम दलीय राजनीति में सहभागिता के इच्छुक नहीं हैं। वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था में व्याप्त परिसीमायें एवं सांस्कारिता के पक्ष इतनी गहराई तक विद्यमान हैं कि उपयुक्त राजनीति राजनीतिक प्रणाली में हाशिये पर आ गयी है। हम संस्थापन के बाहर से ही राजनीतिक प्रभाव बनाने के इच्छुक हैं। पर हम नागरिकीय समाज की उस भूमिका की तरह कार्य नहीं करते जो राजनीतिक व्यवस्था के साथ धोखेबाजी करती है। हम नागरिकीय समाज की उस भूमिका की तरह भी नहीं जो उन सार्वजनिक जन नीतियों का सुझाव देते हैं जहाँ अवसरवादी राजनीति की रणनीति राजनीतिक दलों से जुड़ जाती है। ये सब वे उच्च स्तरीय खेल हैं जो नागरिकीय समाज एवं राजनीतिक समाज के पृथक्करण के महत्व को नकारते हैं। वास्तव में हमारा उद्देश्य तो उन राजनीतिक समीकरणों को प्रस्तुत करना है जिनकी आज के दौर में तत्काल आवश्यकता है। हमारा ध्येय है कि प्रतिनिधित्वकारी लोकतन्त्र प्रत्येक स्थान पर उपस्थित हो और राजनीति केवल प्रौद्योगिकीविदों, संकीर्ण सोच के राजनीतिज्ञों एवं बौद्धिक अभिजनों तक सीमित होकर न रह जावे। सार्वजनिक/जन नीतियों के विस्तृत प्रस्ताव देने के पूर्व हम अपने उस दृष्टिकोण को आमूल चूल रूपान्तरण के अन्तर्गत लाना चाहते हैं जिसके माध्यम से वर्तमान मुद्दों की हम पड़ताल कर रहे हैं। ■

> Sociopedia.isa के तीन वर्ष

बर्ट क्लेन्डरमान्स, VU विश्वविद्यालय, एमस्टर्डम, नीदरलैण्ड और आईएसए उपाध्यक्ष वित्त, 2002–2006

कुछ वर्ष पूर्व आईएसए की कार्य–कारिणी ने समीक्षा लेखों के वार्षिक अंक के प्रकाशन की संभावनाओं पर चर्चा की। प्रस्ताव यह था कि एक पुस्तक के बजाय आन–लाइन पत्रिका का प्रकाशन किया जाए; हमने यह तर्क प्रस्तुत किया कि पुस्तक का प्रकाशन इतना अधिक समय लेगा कि लेख प्रकाशन के समय तक पुराने हो जायेंगे। दूसरी तरफ आन लाइन पत्रिका लेख के तैयार होते ही उसका प्रकाशन कर देगी और अंतिम तिथि चूकने की कोई समस्या नहीं होगी। मिशेल विवोरका (Michel Wieviorka)ए बर्ट क्लेण्डरमान्स (Bert Klandermans)ए और इजाबेला बार्लिन्सका (Izabela Barlinska) ने इकट्ठे हो कर जो बाद में विवोरका की अध्यक्षीय परियोजना बनी पर विमर्श किया। केन्जी कोसाका (Kenji Kosaka), ने क्योंकि एक समान विचार विकसित किया था, अतः उन्हें भी संस्थापकों में सम्मिलित किया गया। इस तरह Sociopedia का जन्म हुआ।

आईएसए के साथ सम्बद्धता का आभार मानने और इसे अन्य पहलों से भिन्न करने के लिए इसका नाम Sociopedia.isa, ज्ञान के उत्पादन और प्रसार में एक नई अवधारणा, रखा गया। इसने दो विश्वों के श्रेष्ठ का संयोजन किया : इन्टरनेट के द्वारा शीघ्र प्रकाशन और कल्पनाशील संपादन और सहकर्मी समीक्षा द्वारा पक्की और वैज्ञानिक गुणवत्ता सुनिश्चित करना। जहाँ अनुभवी संपादक और सहकर्मी समीक्षक इसकी उच्चतम गुणवत्ता को सुनिश्ति करते हैं वहीं इन्टरनेट नवीनतम उत्कृष्ट समीक्षा लेखों को जुटाना संभव बनाता है। तब, Sociopedia.isa ''जीवन्त सामाजिक विज्ञान'' की पेशकश करता है। यह प्रयोक्ता को अद्यतन प्रविष्टियाँ जिनका परिशोधन नियमित रूप से किया जायेगा का वादा करता है। दो वर्षों के पश्चात मूल लेख के लेखकों को प्रविष्टि के नवीनीकरण के लिए कहा जाता है। इसके अलावा, प्रत्येक प्रविष्टि के लिए चर्चा का पूरक अनुभाग है।

तीन वर्ष पूर्व, प्रथम पाँच लेख अपलोड़ किये गये थे। अपनी स्थापना के बाद Sociopedia.isa ने विषयों की एक विस्तृत श्रंखला जिसमें विरोध, सामाजिक संघर्ष, यौन भूमिकाएँ, आपदा अध्ययन, स्वास्थ्य एवं रोग, डायसपोरा, याददाश्त, गतिशीलता, रोजमर्रा का जीवन, अप्रवासी, ट्रांसनेशनलिज्म, लौकिकीकरण एवं रिफ्लेक्सिविटी सम्मिलित है पर 35 लेख प्रकाशित किये हैं। अपने आईएसए के पासवर्ड को काम में लेते हुए, आईएसए के सदस्य Sociopedia.isa को आईएसए की वेबसाइट या Sage की वेबसाइट से देख सकते हैं। प्रत्येक 3–4 महीनों में पाँच आईएसए लेख निशुल्क रूप से भी उपलब्ध हैं। Sociopedia.isa को हजारों प्रयोक्ताओं ने देखा है।

Sociopedia.isa के लिए प्रविष्टियाँ ई–मेल द्वारा sociopedia.isa.fsw@vu.nl पर भेजी जा सकती हैं। इच्छुक व्यक्ति आईएसए की वेबसाइट पर सोशियोपिडिया सब्मिशन प्रोसिजर्स (sociopedia submission procedures) को भी देख सकते हैं। एक आदर्श Sociopedia.isa लेख, ग्रंथ सूची हटाने के पश्चात, 7000 शब्दों का होता है। लेख अंग्रेजी में होने चाहिऐं परन्तु Sociopedia.isa लेखकों को अन्य भाषा जैसे फ्रेंच या स्पेनिश में भी सामानांतर रूप से प्रति भेजने के लिए प्रोत्साहित करता है। लेखक को यह ध्यान रखना आवश्यक है कि ऐसा अनुवादित लेख अंग्रेजी संस्करण के जैसा ही हो। एक आदर्श Sociopedia.isa लेख की निम्न संरचना है : सैद्धान्तिक उपागमों का सिंहावलोकन; आनुभाविक साक्ष्यों की समीक्षा; लिखे जाने तक शोध का मूल्यांकन; भविष्य में सैद्धान्तिकरण और अनुसंधान किस दिशा में जा सकते हैं पर चर्चा। लेख को निम्न तीन तत्वों के साथ सम्पूर्ण होना चाहिए : उल्लेखित संदर्भ, आगे अध्ययन के लिए सटीक सुझाव (''यह लेख पढ़िये क्योंकि .....''); और तकरीबन तीन वाक्यों की लेखक की लघु जीवनी।

बर्ट कलेन्डरमान्स Sociopedia.isa के सम्पादक हैं। सह सम्पादक हैं : डेवोराह कालेकिन–फिशमेन, केन्जी कोसाका, एलिजा रिस, आर्टुरो रोड्रिग्ज मोरेटो और हेनरी लस्टिगर थालेर। नियमानुसार प्रविष्टियाँ कम से कम दो समीक्षकों को भेजी जाती हैं। सामान्यतः सम्पादक लेखकों के साथ तब तक कार्य करते हैं जब तक प्रविष्टि स्वीकृत नहीं समझी जाती है। लेख के स्वीकृत होने के पश्चात् कुछ ही हफ्तों में प्रकाशित किया जाता है। 2013 से आरंभ हो कर, प्रत्येक वर्ष 8–10 Sociopedia.isa प्रविष्टियों का चयन आईएसए की दो ऑफ लाइन पत्रिकाओं में से एक, करण्ट सोशियोलोजी के समीक्षा अंक में प्रकाशन हेतु किया जायेगा। इससे Sociopedia.isa में प्रकाशन और भी अधिक आकर्षक हो जाता है।

एक और Sociopedia.isa Colloquium नामक नवाचार है जो मान्य Sociopedia.isa समीक्षा लेख का विस्तार है। यह भी समान संपादन और सहकर्मी समीक्षा प्रक्रिया जिसमें अनुभवी संपादक एवं सहकर्मी समीक्षा संभावित उच्चतम गुणवत्ता को सुनिश्चित करेंगे, से नियन्त्रित होगा। Sociopedia.isa Colloquium एक विख्यात और अग्रणी लेखक, दी गई समाजशास्त्रीय समस्या या थीम पर अपना मत सारांश में प्रस्तुत करेगा जिसके बाद, मुख्य लेख की पद्धति को सम्बोधित और मूल्यांकन करने वाले तीन या चार लेख होंगे। तीन या चार टिप्पणीकर्त्ता आलोचनात्मक/समीक्षात्मक चर्चाकार की भूमिका में होंगे। हेनरी लस्टिगर थालेर विश्वबन्धुत्व (Cosmopolitism) पर एक Colloquium तैयार कर रहे हैं जबकि डेवोराह कालेकिन ''इन्द्रियों के समाजशास्त्र'' पर।

मैं सभी लोगों को जो Sociopedia.isa में अपने विशिष्ठ क्षेत्र की समीक्षा लिखने के इच्छुक हैं को Sociopedia.isa पर एक लेख भेजने के लिए आमंत्रित करता हूँ। ■

> सभी के लिए बेहतर स्वास्थ्य सेवा

ऐलन कुह्लमान, गोथे विश्वविद्यालय, फ्रेंकफर्ट, जर्मनी, निर्वाचित अध्यक्ष, RC 52 (पेशों का समाजशास्त्र), क्लॉस वेण्ट, सीगन विश्वविद्यालय, जर्मनी, बोर्ड सदस्य RC 19 (गरीबी, सामाजिक कल्याण एवं सामाजिक नीति), और ईवी बरगोट, ओटावा विश्वविद्यालय, कनाडा, उपाध्यक्ष RC 15 द्धस्वास्थ्य का समाजशास्त्र)

सभी नागरिकों के लिए बेहतर स्वास्थ्य सेवाएँ सामाजिक असमानता और गरीबी से लड़ने के लिए एक कुंजी है और दुनिया भर के नीति निर्माताओं के एजेण्डा में उच्च स्थान पर है। अपनी कई भिन्नताओं के बावजूद वैश्विक दक्षिण एवं पूर्व की उभरती स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था और यहाँ तक कि पश्चिम के सभी स्थापित कल्याण राज्य भी स्वास्थ्य, सेवाओं के संगठन, वितरण और पहुँच में सुधार लाने की चेष्ठा कर रहे हैं। इसमें स्वास्थ्य पेशेवरों को नियन्त्रित करने वाले नये तरीके भी सम्मिलित हैं। इन प्रक्रियाओं के लिए सामाजिक उत्तरदायित्व और सार्वजनिक क्षेत्र की सेवाएँ आबादी के स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त निर्णायक रही है, हालाँकि बाजार और प्रबंधन, वित्तीय प्रतिबंधों के वर्तमान माहौल में उच्च लोकप्रियता का आनंद ले रहे हैं। अभी ऐसे रचनात्मक नीतिगत समाधान जो शक्ति सम्बन्धों की वास्तविकता के प्रति संवेदनशील हों, की अत्यन्त आवश्यकता है।

ब्यूनेस आयर्स में आयोजित आईएसए का द्वितीय फोरम उभरती हुई स्वास्थ्य नीति एवं सेवाओं के क्षेत्र को समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से और अंतर्राष्ट्रीय पद्धति के लाभ से उजागर करने का एक उत्तम अवसर था। (इसे भी देखिए करण्ट सोशियोलोजी, विशिष्ट अंक, जुलाई 2012) यह नया क्षेत्र प्रकृति में पार–वैषयिक (transdisciplinary) है और इसके फलस्वरूप हमने संयुक्त सत्रों का आगाज किया। इसकी प्रतिक्रिया अत्यन्त जबर्दस्त थी और हमारी मेजबान शोध समितियों को इसके लिए धन्यवाद RC 15 (स्वास्थ्य) और RC 19 (सामाजिक नीति) ने ''सभी के लिए बेहतर स्वास्थ्य सेवाएँ'' पर संयुक्त सत्र आयोजित किया, जबकि RC 15 और RC 52 (व्यवसायिक पेशेवर समूह) ने विशेष तौर पर पेशेवर शासन पर संयुक्त सत्र रखा। सभी सत्रों में पत्रों की अधिकता थी और वे जीवन्त बहस के दृश्य थे।

स्वास्थ्य नीतियों और सेवाओं में क्या महत्वपूर्ण है और अंतर्राष्ट्रीय अनुभवों से क्या सीखा जा सकता है पर चर्चा करने के लिए इन सत्रों ने एक मंच प्रस्तुत किया। सबसे आकर्षक और अनूठी बात यह थी कि संयुक्त सत्रों ने सभी महाद्वीपों के अनुसंधान–कर्ताओं को एकत्रित कर दिया और भाषा अवरोधों को द्विभाषी प्रस्तुतियों और चर्चाओं के द्वारा रचनात्मक रूप से पार कर लिया गया। प्रतिभागी उत्तर एवं दक्षिण अमरीका, विभिन्न यूरोपीय देश और ऑस्ट्रेलिया के साथ साथ नाइजिरिया, दक्षिण अफ्रीका और जापान से भी आये।

> "संयुक्त सत्रों के लिए जबरदस्त समर्थन"

प्रमुख विषयों में उच्च विविधता पूर्ण और गतिशील स्वास्थ्यसेवा क्षेत्र में तुलनात्मक अनुसंधान की चुनौतियाँ सम्मिलित थीं। यहाँ अधिक जटिल प्रारूपीकरण, शोध के लघु और वृहद स्तर को जोड़ने की आवश्यकता और संकेतकों की एक श्रंखला के प्रयोग के लिए सुझाव भी थे। एक और मुद्दा असमानताओं के प्रश्न का था। स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच में लगातार और यहाँ तक कि बढ़ते अंतर के उदाहरणों की कोई कमी नहीं थी; इसमें लैंगिक समानता, महिला स्वास्थ्य सेवाएँ और प्रजनन अधिकार के साथ ही संस्कृति, भाषा, स्थान और नृजातीयता के मुद्दे जो असमानताओं को निर्मित कर सकते हैं, भी सम्मिलित थे। सभी देशों में समान विषय अधिकारों की प्रासांगिकता और स्वास्थ्य सेवाओं की सार्वभौमिक पहुँच का महत्व; सामाजिक आंदोलनों एवं कर्ताओं की भूमिका; और सार्वजनिक एवं निजी स्वास्थ्य सेवाओं के मध्य बदलते संतुलन थीं। चर्चाओं के एक और पहलू ने पेशेवर शासन की जटिलता और स्वास्थ्य मानव संसाधनों के कुशल प्रबंधन की आवश्यकता को सम्बोधित किया।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि मौजूदा शोध समितियों को संयुक्त सत्रों ने व्यापक रूप से मूल्यवान बनाया है और हम भावी सहयोगों के लिए तत्पर हैं और योकोहामा के लिए पहले ही सेतु का निर्माण कर चुके हैं। ■

> श्रद्धांजलि : इवान वर्गा, 1931-2012

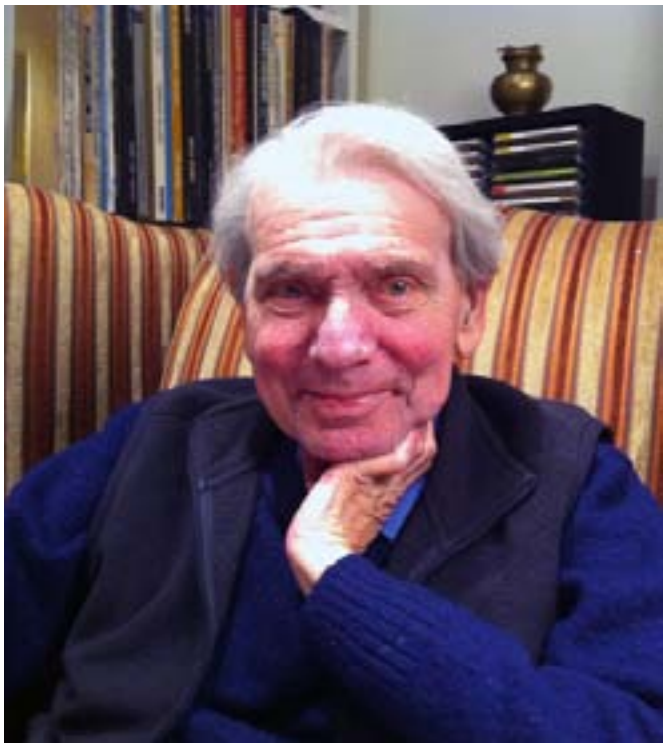

इवान वर्गा ने कई जिन्दगीयाँ जीयीं। उनमें से एक आईएसए तथा विशेष रूप से आर सी 22 के लिए कभी न खत्म होने वाली निष्ठा शामिल है, जिसके लिए वह कईयों द्वारा बहुत ही प्यार से याद किये जाते रहेंगे। निम्नलिखित श्रद्धांजली उनकी पत्नी और बेटी, इवा वर्गा तथा क्रिस्टीना वर्गा द्वारा लिखी गई है।

इवान वर्गा किंग्सटन, कनाडा में अपने घर पर।

जिस चीज पर वह विश्वास करते थे, इवान वर्गा उसके लिए उठ खड़े होते थे फिर चाहे उनकी राय कितनी भी खतरनाक या अलोकप्रिय क्यों न हो। वह बुडापेस्ट, हंगरी के एक समावेषित यहूदी परिवार से थे। द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान वह यहूदियों के लिए अधिक भोजन, राशन जुटाने के लिए कर्फ्यू के घन्टों में अपने पीले सितारे के बिना भी बाहर जाकर अपने आप को उठाये जाने या डेन्यूब नदी में गोली मारे जाने की जोखिम ले लेते थे।

रूसीयों से मुक्ति का सपना देखते हुए वह बच गये जो कि एक दमनकारी शासन के दुःख स्वपन में बदल गया था। लेकिन उन्होंने अपने प्रोफाईल को कभी भी कम नहीं आंका वरन् 1956 के हंगरी विद्रोह के दौरान शासन के बारे में गम्भीरता पूर्वक बोलते और लिखते रहे, जबकि उन्हें निशाना बनाया गया था। बचने के लिए वह पौलेण्ड भाग गये तथा जब उनके लिए वापसी सुरक्षित हो गयी, हंगरी पुनः लौट गये, जहां उन्हें काम करने के लिए सालों तक काली सूची में डाला हुआ था।

युद्ध के बाद उन्होंने जोर्ज लुकास् (Georg Lukács) जैसे दिग्गजों के साथ अध्ययन किया और बाद में अपनी डॉक्टरेट उपाधि अर्जित की। उनकी और इवा लुन्स्की की शादी 1961 में हुई तथा क्रिस्टीना 1968 में जन्मी।

अंग्रेजी सहित कई भाषाओं पर अधिकार रखते हुए, इवान को हंगरी छोड़कर तंजानिया में विश्वविद्यालय में पढ़ाने की अपने परिवार के साथ अनुमति प्रदान की गई। लेकिन अपने चार साल के कार्यकाल की समाप्ति के बाद, उन्होंने हंगरी में अपने जाने हुए लेकिन धुंधले भविष्य को छोड़कर पश्चिम में अपने सर्वथा अनिश्चित भविष्य के लिए, परिवर्तन करना तय किया। जब वे लोग जर्मनी में उतरे तब उनके पास अपनी शिक्षा तथा कुछ अफ्रीकी कलाकृतियों के अलावा कुछ भी नहीं था।

उन्होंने जर्मनी के विश्वविद्यालयों में पढ़ाया, लेकिन एक वर्ष बाद उन्हें किंग्सटन, कनाडा की क्वीन्स विश्वविद्यालय में समाजशास्त्र पढ़ाने के लिए नियुक्त कर लिया गया। 1996 में अपनी सेवानिवृत्ति तक वह वहाँ रूके जब उन्हें वहाँ अवकाश प्राप्त मानद प्रोफेसर बनाया गया।

अपने कैरियर के दौरान उनकी रूची कला, संस्कृति और धर्म के समाजशास्त्र में रही वहीं बाद में उसमें शरीर के समाजशास्त्र में रूची भी जुड़ गयी। उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय मंच पर काम किया, अपने दुनिया भर में फैले हुए साथियों से सहयोग किया, हार्वर्ड के सेन्टर फार स्टेडी आफ वर्ल्ड रीलीजन्स से वरिष्ठ अनुसंधान फैलोशिप तथा फ्रांस तथा हंगरी में शोध कार्य शामिल हैं।

अवकाश ग्रहण करने के बाद भी उन्होंने अन्तर्राष्ट्रीय प्रकाशनों में लिखना और सम्पादन करना तथा अपने निर्देशों में कान्फ्रेन्सेज आयोजित करना तथा उनमें भाग लेना जारी रखा। आईएसए के साथ, विशेष रूप से धर्म के समाजशास्त्र की शोध समिति के साथ अपने एक दशक पुराने काम को भी जारी रखा। शोध समिति के अध्यक्ष के रूप में उनके कार्यकाल की समाप्ति के बाद वह मानद अध्यक्ष बने जो कि उनके पास मृत्यु तक था। ■

> 'मुक्त पहुँच' कौन से द्वार खोलती है?

जेनिफर प्लाट, ससेक्स विश्वविद्यालय, यूके, एवं आईएसए उपाध्यक्ष प्रकाशन, 2010–14

'मुक्त पहुँच' एक आंदोलन है जो अपनी उत्पत्ति के स्थान से काफी दूर तेजी से फैल रहा है और सामाजिक विज्ञानों के समीप आते ही यह अपने साथ कुछ चुनौतियाँ ला रहा है। मूल विचार सरल और आकर्षक है : शोध पत्रिकाओं में उपलब्ध ज्ञान का लाभ सभी को मिलना चाहिए। प्राकृतिक वैज्ञानिकों का उनके द्वारा काम में ली जाने वाली शोध पत्रिकाओं के कुछ प्रकाशनों द्वारा अत्यधिक उच्च कीमत लगाना और मुनाफा कमाने के प्रति क्रोध, जिसके कारण Elsevier पत्रिकाओं का बहिष्कार किया गया, आंदोलन के एक तरफ से बहुत महत्वपूर्ण रहा है। नई ब्रिटिश सरकारी नीति के लिए अत्यन्त आवश्यक, नवीनतम वैचारिक थीम यह है कि राज्य द्वारा वित्त पोषित उत्पाद राज्य के नागरिकों को मुक्त रूप से उपलब्ध होने चाहिऐं। इसी सम्बन्ध में यह दावा किया गया कि व्यवसाय ऐसी पहुँच से विशेष रूप में लाभान्वित होगे और फलस्वरूप राष्ट्रीय आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करेंगे। यू.एस.ए. और ब्रिटेन के मुख्य वित्त सहायता निकाय अब यह चाहते हैं कि उनके द्वारा वित्त पोषित शोध का प्रकाशन उन्हीं पत्रिकाओं में होना चाहिए जो अपने पाठकों को मुफ्त पहुँच देती हों–इस प्रकार पत्रिकाओं पर अपनी कार्यशैली बदलने के लिए दबाब पड़ रहा है।

वर्तमान में सामान्य प्रणाली है कि प्रकाशक शोध पत्रिकाएँ प्रकाशित करते हैं और उन तक पहुँच सदस्यता शुल्क के भुगतान पर निर्भर होती है। अधिकांशतः इन दिनों यह विश्वविद्यालयों द्वारा चुकाया जाता है जो फिर इन पत्रिकाओं को अपने सदस्यों के लिए मुफ्त में आनलाइन उपलब्ध कराते हैं। यह इस तथ्य से और भी जटिल हो जाता है कि बड़े प्रकाशक अब अधिकतर पुस्तकालयों को अकेली शोध पत्रिका के बजाय शोध पत्रिकाओं को एक बड़े बण्डल के रूप में बेचते हैं जो कई पत्रिकाओं तक पहुँच तो उपलब्ध कराता है परन्तु काफी कीमत पर। लेख के लेखकों को भुगतान नहीं किया जाता है और काफी अवैतनिक श्रम विश्वविद्यालय के स्तर पर चला जाता है परन्तु इस बात में भी कोई शंका नहीं है कि उत्पादन प्रक्रिया में भी काफी खर्चा होता है जिसको किसी तरह पूरा करना आवश्यक है।

मोटे तौर पर 'मुक्त पहुँच' के दो वैकल्पिक मॉडलों पर व्यापक चर्चा हो रही है। ''गोल्ड'' मॉडल के अनुसार, प्रकाशन की लागत को पूरा करने के लिए लेखकों (अर्थात् विश्वविद्यालय या फिर शोध को वित्त सहायता देने वाले निकाय) द्वारा एक बड़ा शुल्क दिया जाना चाहिए, लेकिन फिर ये लेख पाठकों के लिए शुल्क–मुक्त होंगे। ''ग्रीन'' मॉडल के अनुसार लेखकों को भुगतान देने की आवश्यकता नहीं है परन्तु लेखों को 6 या 12 महीनों की प्रतिबंधित अवधि (कुछ प्राकृतिक विज्ञान क्षेत्रों के लिए काफी लम्बी) के पश्चात् कुछ सुलभ भंडार में जमा करने की आवश्यकता है।

> **"आईएसए के लिए 'मुक्त पहुंच' के गहरे परिणाम हो सकते हैं"**

यह शायद सदस्यता शुल्क के लिए कुछ प्रलोभन हो।

दोनों ही मॉडल के तहत, लेखक उनके लेखों तक पाठकों की पहुँच और पाठक ऐसी पहुँच से लाभान्वित होते हैं। परन्तु इसके अन्य क्या परिणाम है?

गोल्ड : गरीब देशों के अधिकांश लेखक शक्तिशाली धनी देशों की पत्रिकाओं में तब तक प्रकाशन नहीं करवा पायेगें जब तक उनके पास अंतर्राष्ट्रीय वित्त पोषण संस्थान से अनुदान न हो। समाजशास्त्र में, ऐसा स्वतः नहीं होता कि लेख अनुदान पोषित शोध पर आधारित हों। यह स्पष्ट नहीं है कि ऐसे अनुदान के बिना लेखकों को शुल्क से मुक्त रखा जायेगा या नहीं। अमीर देशों में भी गरीब विश्वविद्यालयों के लेखकों के प्रकाशन उनके प्रशासन द्वारा सीमित किये जा सकते हैं। सदस्यता शुल्क पर अभी खर्च होने वाले धन को विश्वविद्यालय बचा लेगी परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि वे इस धन को शोध को समर्थन देने में उपयोग में लेगी। उपलब्ध शोध में कमी आने और उसके विस्तार में पक्षपात होने की संभावना है।

ग्रीन : कोई भी प्रकाशन की लागत का भुगतान नहीं करेगा। यह तक तक नहीं होगा जब तक प्रतिबंध काफी पुस्तकालयों या पाठकों को शोध पत्रिका की अन्तर्वस्तु को अग्रिम रूप से पहुँचने के लिए शुल्क का भुगतान करने के लिए तैयार करेगा। (सामाजिक विज्ञानों में शोध पत्रिका में लेखों की जिन्दगी करीबन एक साल से अधिक होती है) अतः प्रकाशक गोल्ड मॉडल को पसंद करते हैं। आईएसए जैसी प्रबुद्ध संस्थाएँ जिन्हें लेखकों द्वारा शुल्क का भुगतान स्वीकार्य नहीं होगा, प्रकाशनों से होने वाली महत्वपूर्ण आय, वह आय जो अन्य गतिविधियों का समर्थन करती है, को गंवा देगी।

इन बुनियादी मॉडल के कई भिन्न रूप भी हैं जिनके बारे में हम यहाँ चर्चा नहीं कर रहे हैं। यह भी स्वीकारा जा सकता है कि ऐसी कई संकर (हाइब्रिड) पत्रिकाएँ हो सकती है

>>

जो कुछ लेखों को किसी कोष के लिए देने के लिए तैयार हो जायें जबकि अन्य नहीं देना चाहें; यह अमरीकन समाजशास्त्रीय परिषद की वर्तमान नीति है। कुछ पत्रिकाएँ हट में उन लेखों को पसंद करेंगी जो कि ऐसे निधीकरण से मुक्त हों जो मुक्त पहुँच प्रदान करना अनिवार्य करती हैं। ब्रिटिश राष्ट्रीय परिषद अब न सिर्फ केवल प्रकाशित लेखों पर मुक्त पहुँच बल्कि उनके आंकड़ों तक भी पहुँच चाहती है ताकि उनका दोहन व पुनः विश्लेषण किया जा सके। यह सामाजिक विज्ञानों में गोपनीयता के मुद्दे से कैसे निपटेगा?

आईएसए को अपने अंतर्राष्ट्रीय मिशन के उपयुक्त नीति विकसित करने की स्पष्ट आवश्यकता है और यदि इसके पास यह सूचना है कि यह मुद्दे विश्वव्यापी समाजशास्त्र में कैसे उभर रहे हैं तो इसमें बहुत मदद मिलेगी। हम जानते हैं कि कई स्थानों पर पत्रिका प्रकाशन और निधीयन की व्यवस्था यूरोप और उत्तरी अमरीका में स्टैण्डर्ड (स्तर मान्य) मानी गई व्यवस्था से भिन्न होती है और अन्यत्र चर्चा से कई और प्रश्नों को उठाया जा सकता है जिन्हें हमें ध्यान में रखना चाहिए। आप हमें जहां आप स्थित है वहाँ से चीजें कैसी दिखती हैं के बारे में और आपके विचार में आईएसए की नीति क्या होनी चाहिए से हमें अवगत करायेंगे तो हम आपके आभारी होंगे। कृपया मुझे इस पते पर लिखें : j.platt@asussex.ac.uk ■

> भारतीय सम्पादक दल का परिचय

ईश्वर मोदी, अध्यक्ष भारतीय समाजशास्त्र परिषद, एवं आईएसए की कार्यकारणी के सदस्य, 2010–2014

जब मैं GD 2.4 में वैश्विक संवाद के ईरानियन सम्पादक दल के बारे में पढ़ रहा था तो इस तथ्य नें मुझे प्रभावित किया कि तकरीबन वे सभी या तो अण्डरग्रेजुएट अथवा ग्रेजुएट विद्यार्थी थे। उनकी अपेक्षा भारतीय सम्पादक दल के सदस्य कुल मिलाकर अधिक उम्रदराज तथा अनुभवी हैं। हमारे दल का प्रमुख केन्द्र बिन्दु विषय की जटिल तकनीकी भाषा का प्रमाणिक हिन्दी अनुवाद उपलब्ध कराना है जो कि कई बार एक कठिन कार्य साबित होता है। हमारे लिए यह सुखद आश्चर्य का विषय था जब देश के अन्य विश्वविद्यालयों के हमारे कतिपय साथियों ने यह बतलाया कि वैश्विक संवाद के हिन्दी संस्करण को उनके विद्यार्थियों द्वारा वैश्विक संवाद का अंग्रेजी से हिन्दी में अनुवाद एक मापदण्ड के रुप में प्रयुक्त किया जाता है ताकि वे तुलना करके यह महसूस कर सकें कि उन्हें कहां सुधार की आवश्यकता है। जो भी हो, वैश्विक संवाद के अंग्रेजी एवं हिन्दी दोनों ही संस्करणों की चर्चा अब इसकी वैश्विक सामग्री की वजह से, जो कि हमेशा से बहुत ही दिलचस्प, सूचनापरक, एवं ज्ञानपरक रही है, भारतीय शैक्षणिक जगत में बढती ही जा रही है । अतः हम सभी वैश्विक संवाद से अपने सम्बन्ध की वजह से गौरवान्वित महसूस करते हैं। ■

प्रोफेसर ईश्वर मोदी भारत में अवकाश अध्ययन के संस्थापक जनक हैं। वह वर्तमान में भारतीय समाजशास्त्र परिषद के अध्यक्ष, इण्डिया इण्टरनेशनल इन्सटीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज के निदेशक तथा इसी के साथ आईएसए की वर्तमान कार्यकारणी के सदस्य हैं। उन्हें एक बार पुनः आईएसए की अवकाश के समाजशास्त्र की शोध समिति का अध्यक्ष (2010–2014) निर्वाचित किया गया है। सन् 2000 में अपनी सेवानिवृति के समय वे राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर में अवकाश एवं पर्यटन अध्ययन केन्द्र के संस्थापक निदेशक थे। उसके पश्चात उन्होनें इण्डियन इन्सटीट्यूट ऑफ हैल्थ मैनेजमैन्ट रिसर्च में विजिटिंग प्रोफेसर के रुप में अपनी सेवाऐं प्रदान कीं। वे इण्डियन लेजर स्टडीज् एसोसिएशन के भी संस्थापक अध्यक्ष हैं। उन्हें वर्ल्ड लैजर ऑरग्नाइजेशन की ऑनरेरी लाईफ मैम्बरशिप से सम्मानित किया गया और वर्तमान में वे वर्ल्ड लैजर एकेडमी के सीनियर फैलौ एवं संस्थापक सदस्य हैं। उन्होनें अनेक राष्ट्रीय एवं अर्न्तराष्ट्रीय कांफ्रेसेज का आयोजन किया है तथा वह आठ पुस्तकों के लेखक, सह–लेखक अथवा सम्पादक हैं।

राजीव गुप्ता वर्तमान में राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर के समाजशास्त्र विभाग में प्रोफेसर एवं विभागाध्यक्ष हैं। वे मार्क्सवाद के समाजशास्त्र के उत्सुक विद्यार्थी हैं। उन्हें सन् 2007 में इण्डियन सोशल साइन्स एसोशिएशन ने डी.पी. मुकर्जी सीनियर सोशल साइन्टिस्ट फैलौशिप अवार्ड से सम्मानित किया। उन्होनें हाल ही में पाठय्पुस्तकों के समाजशास्त्र पर एक अध्ययन किया है। उनकी पुस्तक कम्युनलाइजेशन आफॅ एज्यूकेशन अथवा एज्यूकेशन ऑफ कम्युनलाइजेशन नें एक राष्ट्रीय बहस को जन्म दिया जिसकी वजह से दक्षिणपंथी राजनैतिक दलों को शर्मिन्दगी महसूस करनी पडी। भारतीय समाज के एक उत्सुक अवलोकनकर्ता होने के नाते उन्होनें कृषि सम्बन्धों, घरेलू हिंसा, मजदूर संगठन आन्दोलनों, शहरी विकास, शिक्षा एवं शैक्षणिक पेशे जैसी सामाजिक प्रघटनाओं का परिक्षण किया है। उनका डाक्टोरल कार्य तत्कालीन भारतीय समाज मे शैक्षणिक बुद्धि जीवियों की भूमिका पर था। एक लोक समाजशस्त्री के नाते उन्होनें विविध आन्दोलनों जिनमें कि नव–उदारवादी अर्थव्यवस्था के विरुद्ध होने वाले आन्दोलन भी सम्मिलित हैं में हमेशा भाग लिया।

डॉ0 रश्मि जैन राजस्थान विश्वविद्यालय के समाजशास्त्र विभाग में पढ़ाती हैं। उनकी रुचि विकास एवं संचार, वैश्विकरण अध्ययन, कानून के समाजशास्त्र, अवकाश अध्ययन एवं युरोपियन अध्ययन के क्षेत्र में है। वे सोशल वर्क में मास्टर्स डिग्री की क्षेत्रकार्य गतिविधियों का भी समन्वय कर रही हैं। वर्तमान में वे 'सोसाइटी एण्ड कल्चर आफ राजस्थान अण्डर दि इम्पेक्ट आफॅ ग्लोब्लाइजेशन' में सम्मिलित हैं। उनके द्वारा प्रकाशित कार्यों में कम्युनिकेटिंग रुरल डवलपमेन्ट – स्ट्रेटेजीज् एण्ड आल्टरनेटिव्ज सम्मिलित है। एक शिक्षक होने के साथ–साथ उन्होनें निराश्रित महिलाओं को आवाज प्रदान की है एवं राजस्थान के नागरिक समाज संगठनों के साथ भी सहयोग किया है।

उदय सिंह पिछले छः वर्षों से ईश्वर मोदी के गतिशील नेतृत्व में इण्डिया इण्टरनेशनल इन्सटीट्यूट ऑफ सोशल साइन्सेज के साथ कार्यरत हैं। उन्होनें राजस्थान विश्वविद्यालय से इकोनोमिक एडमिनिस्ट्रेशन एण्ड फाइनेन्शियल मैनेजमैन्ट में मास्टर्स डिग्री प्राप्त की है। वैश्विक संवाद के एक अनुवादक होने के नाते वे विभिन्न समाजशास्त्रीय प्रघटनाओं एवं दुनियां भर में होने वाली घटनाओं को जानने के लिए अत्यधिक उत्सुक रहते हैं।

> हाशिये पर जीवित रहना

एलेक्सिया वेबेस्टर, फोटोग्राफर तथा एडवर्ड वेबेस्टर, विट्वाटर्सरेण्ड विश्वविद्यालय, साऊथ अफ्रीका तथा पूर्व अध्यक्ष श्रमिक आन्दोलनों पर शोध समिति (आर सी 44)

जोहान्सबर्ग के आन्तरिक शहर में निर्मित अधिकांश रोजगार जिवित रहने योग्य रोजगार ही हैं, अथवा वे हैं जो कि अनिश्चित रोजगार अथवा अनौपचारिक अर्थव्यवस्था के नाम से जाने जाते हैं । इनमें शामिल हैं नाई और गलियों में काम करने वाले व्यावसायिक लोग, आदमी और औरतें जो कि सड़क के किनारे टैक्सियाँ साफ करते हैं, अन्य लोग जो कि घर से काम करते हैं या अवैध शराब खानों में (बिना अनुज्ञापत्रधारी शराब घरों में) इसी प्रकार जो कि गाडियाँ धकेल कर गलियों से कागज और अन्य अवशिष्ट पदार्थों को इकट्ठा करते हैं।

हमने इनमें से एक अनौपचारिक अवशिष्ट पुर्नचक्रक के चित्र लिए, एक उम्रदराज अश्वेत महिला जो कि अपने पुर्नचक्रण केन्द्र की राह पर थी। प्रथम दृष्टया वह एक विचित्र जीव लग रही थी क्योंकि उस वजन के कारण जो कि उसने अपनी पीठ पर ढ़ो रखा था हम उसे पहचान ही नहीं पाये। लेकिन यदी आप ध्यान से देखेंगे तो आप उसके शरीर के अंगों को देख सकेंगे जो कि उन अवशिष्ट पदार्थों के बोरों से पूरी तरह ढ़के हुए हैं। वह कोई मदद रहित शिकार नहीं है, वह एक उत्पादक श्रमिक है। वह प्रतिदिन दस घन्टे कागज इकट्ठा करने में व्यतीत करती है और तब उन्हें अपनी पीठ पर जोहान्सबर्ग की गलियों में से पुर्नखरीद केन्द्रों तक विक्रय करने लेकर जाती है। पारम्परिक मत से यह कोई रोजगार नहीं है, यह जीविकोत्पादन की रणनीति है। वह न केवल एक बड़ी मल्टीनेशनल कम्पनी द्वारा खरीदे जाने वाले पुर्नचक्रित कागज की कीमत निर्मित करती है; वह गलियों को भी साफ करती है। यह एक ''ग्रीन'' रोजगार (पर्यावरण हितैशी रोजगार) है लेकिन वह औसतन 5 अमेरिकन डालर ही कमा पाती है।

इन अनौपचारिक श्रमिकों की यह विशेषता है कि ये स्वरोजगार में है। उन्होंने अपने लिए शहर में एक आर्थिक स्थान सफलतापूर्वक बना रखा है, जहां पर वे उन आर्थिक गतिविधियों में व्यस्त रहते हैं जो कि परम्परागत रोजगारों से बहुत अलग हैं। इन अनौपचारिक गति–विधियों का उद्भव समाजशास्त्र को एक पहेली के साथ प्रस्तुत करता है। आधुनिकीकरण सिद्धान्तों का उद्देश्यपरक दृष्टिकोण देखने के बाद 1950 और 1960 के दशकों में यह मान लिया गया था कि लोगों के तेजी से होने वाले प्रवाह को शहरों के गतिशील उद्योग अवशोषित कर लेंगे जैसा कि उन्नीसवीं सदी में यूरापे में हुआ था। हालांकि ऐसा नहीं हुआ। इसके बजाय विकासशील देशों में शहरी आबादी में नाटकीय वृद्धी हुई जो कि छोटे स्तर पर अनौपचारिक आर्थिक गतिविधियों से जिवित है ना कि औपचारिक रोजगार से। तस्वीर में वह अदृश्य है लेकिन वह दुनिया भर में फैली हुई अनिश्चित श्रमिकों की बढ़ती हुई सेना का हिस्सा है। ■